उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

हल्द्वानी

CAFN – 02

सर्टिफिकेट कोर्स इन आयुर्वेदिक फुड एण्ड न्यूर्टिशन

आयुर्वेद का आहारीय चिकित्सा पद्धति में योगदान

विशेषज्ञ समिति

डा0 वी0 पी0 उपाध्याय **प्राचार्य, हिमालयीय आयुर्वेदिक कालेज** **श्यामपुर , ऋषिकेश**	**डा0 एन0 पी0 सिंह** **निदेशक, स्वास्थ्य विज्ञान विभाग** **उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,**
प्रो0 आर0 बी0 सती **रोग एवं विकृति विज्ञान विभाग** **ऋषिकुल राजकीय आयुर्वेदिक कालेज** **हरिद्वार**	**डा0 जे0 एन0 नौटियाल** **पंचकर्म विशेषज्ञ** **दून चिकित्सालय देहरादून**
डा0 वन्दना पाठक **आयुर्वेदिक मेडिकल आफिसर** **कानपुर**	**डा0 सी0 एस0 भागवत** **पूर्व रीडर द्रव्यगुण विभाग** **आयुर्वेदिक मेडिकल कालेज** **झांसी**
डा0 सोहन खण्डूरी **पैक्षिक परामर्शदाता (अंशकालिक)** **उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,**	**डा0 समीर सिंह** **लेक्चरर** **उत्तराखंण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,** **हल्द्वानी, नैनीताल**
कार्यक्रम समन्वयक डा0 समीर सिंह	डा0 सोहन खंण्डूरी

पाठ्यक्रम लेखन एंव सामग्री संकलन

डॉ0 विनोद कुमार जोशी एम0डी0 आई0पी0जी0टी0 जामनगर, गुजरात	डॉ0 समीर सिंह लेक्चरर उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

पाठ्यक्रम सम्पादन

डॉ0 ए0के0 त्रिपाठी
काय चिकित्सा विभाग
गुरूकुल राजकीय आयुर्वेदिक कालेज, हरिद्वार

कुलसचिव उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय की ओर से मुद्रित एवं प्रकाशित।

मुद्रक

उत्तरायण प्रकाषन, हल्द्वानी

उत्तराखण्ड मुक्त विष्वविद्यालय
सर्वधिकार सुरक्षित। इस कार्य का कोई भी अंश उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिये बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।
अधिक जानकारी उत्तराखण्ड मुक्त विष्वविद्यालय हल्द्वानी, नैनीताल से प्राप्त कर सकते हैं।

नोट– पाठ्यक्रम से संबंधित आपके सुझावों का हम स्वागत करते हैं। कृपया अपने सुझाव हमें इस पते पर भेजें–स्वास्थ विज्ञान विभाग, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, नैनीताल।

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

हल्द्वानी

CAFN – 02

सर्टिफिकेट कोर्स इन आयुर्वेदिक फुड एण्ड न्यूर्टिशन

आयुर्वेद का आहारीय चिकित्सा पद्धति में योगदान

इकाई - 1

शारीरिक संरचना **- 01**

इकाई - 2

आहारीय अभाव जनित विकार **- 45**

इकाई - 3

आहार तथा अपकर्षक विकार **- 63**

इकाई – 1

शारीरिक संरचना

गर्भ शरीर, गर्भ स्थिति

शुक्र एवं आर्तव के शुद्ध (गर्मोत्पादन योग्य) होने पर अपने कर्मो के अनुसार प्रेरित हुआ सत्व (मन) युम्ति(सामर्थ्य) अधीन बनकर 'गर्भरूप' हो जाता है ।

अंग विभाग

शरीर के छः अवयव है ।

1. शिर
2. दो बाहु
3. दो पैर
4. अन्तराधि (वाकी शरीर)

	पञ्चमहा भूत	गुण
1.	आकाश	शब्द
2.	वायु	स्पर्श

3. अग्नि रूप

4. जल रस

5. पृथ्वी गंध

पच्चमहा भूतो से दोहोत्पति

- **आकाश तत्व से** – मनुष्य शरीर में छिद्र, श्रोत्र, शब्द, शून्यता (खाली स्थान) का निर्माण होता हैं।
- **वायु तत्व से** – स्पर्श,त्वचा, उच्छवास की उत्पति होती हैं।
- **अग्नि तत्व से** – आंख, रूप, पाक, तेज, पिय, मेधा, वर्ण, शौर्यादि की उत्पति होती हैं।
- **जल तत्व से** – जिह्वा से रस ग्राहक भाग, एवं क्लेद की उत्पत्ति होती है।
- **पृथ्वी तत्व से** – नासिका, गन्ध, अस्थि की उत्पत्ति होती है।

शरीर में मातृजः एवं पितृज भाव

मातृज भाव – कोमल भाग जैसे रक्त, नाभि, हृदय, गुदा आदि शरीर से मातृज भाव कहे जाते हैं।

पितृज भाव – स्थिर या ठोस भाग, अस्थि आदि शुक्र, धमनी, बाल (केश), नख – पितृज भाव द्वारा कहलाते हैं।

आत्मा से उत्पन्न – चित्र, इन्द्रियॉ, नाना प्रकार की योनियों में जन्म आत्मा से उत्पन्न भाव कहे जाते है।

इस प्रकार यह शरीर पंच महाभूतमय है क्योकि शरीर के प्रत्येक अंग, धातु और उपधातु आदि इन महाभूतों से ही बनते है।

धातु उत्पति

इस महाभूत मय शरीर में रक्त का धातु ऊष्मा से परिपाक होने पर सात त्वचायें उत्पन्न होती है जिस प्रकार दूध को गरम करने पर ऊपर मलाई होती है उसी प्रकार से अवभासिनी लोहिता, श्वेता, ताम्रा वेदिनी, रोहिणी एवं मांस धरा आदि सात त्वचायें होती हैं।

सात कलाओं का वर्णनः

रसादि धातुओं और उनके आधार भूत आशयों के बीच जो क्लेद है वह अपनी–अपनी ऊष्मा से पंरिपाक होकर, श्लेष्मा, स्नायु और जरायु से आच्छादित

होकर उन्ही के रूप मे परिणित हेाकर लकड़ी के सार की भॉति कला कहा जाता है, ये कलायें सात हैं ।

मांसधरा, रक्तधरा, मेदोधरा, श्लेष्मधरा, पुरीषधरा, पित्तधरा, शुक्र धरा। सात कलायें हैं।

सात आधारः–

इन्हें आशय भी कहते हैं।

1– प्रथम वातशय है।

2:– रक्ताशय

3:– कफाशय

4:– आमाशय

5:– पित्ताधार (पित्ताशय)

6:– पक्वाशय

7:– मूत्राधार (मूत्राशय)

8:–स्त्रीयों में गर्भाशय(पक्वाशय एवं मूत्राशय के बीच)

जीवन के दस स्थानः–

जीवित या प्राण के दस स्थान है। (Life organs)

दश प्राणायतनानि, मूर्धाजिहवा बन्धनं कण्ठो हृदयं नाभ्झिर्वस्तिर्गुदः शुक्रमोजो – रक्तं च।

वृ0 वाण शा0 5/58, 59.

ये दस जीवन के (विषेश) स्थान है ।

चरक ने

1. मूर्धा,
2. कन्ठ,
3. हृदय,
4. नाभि,
5. गुदा,
6. वास्ति,
7. ओज,
8. शुक्र
9. शोणित,
10. मांस

दस प्राणायतन बताये है (च0चि0 शाखा 7/9)

- शरीर में जाल की भान्ति सोलह जाल है ।

- शरीर में सोलह पृथक कण्डरायें है ।
- छः कूर्च है ।

सेवनिया सात है –

ये सेवनियॉ सिर, मेहन, जिह्वा में होती है। इन्हें शस्त्र या अन्य आघात से बचाना चाहिए। पंचकर्म चिकित्सा में इनमें सावधानी पूर्वक चिकित्सा करनी चाहिए।

- अस्थियों के संघात चौदह है ।
- सीमन्त 18 है (सुश्रत ने 14 सीमन्त बताये हैं।) –
- दांत और नखो को मिलाकर तीन सौ साठ अस्थियॉ है ।
- सुश्रुत व धनवन्तरी के विचार से 300 अस्थियां है ।
- सुश्रुत व धनवन्तरी के विचार से 210 सन्धियां है ।

अस्थियां–

1. कपाल,
2. तरूण,
3. वलय,
4. रूचक,
5. कर्कर नॅलक

भेद से पॉच प्रकार की बतायी हैं।

सन्धियां–

1. कोर,
2. उदूखल,
3. तुन्नसेवनी,
4. प्रतर,
5. सामुदुग,
6. शंखावर्त,
7. मण्डल,
8. वायसतुण्ड

भेद से आठ प्रकार की है ।

स्नायु–

स्नायु बन्धन को कहते है ।

1. सुशिर
2. प्रतानवर्ती
3. पृथु
4. वृत

भेद से चार प्रकार के होते हैं। स्नायु के कारण ही मनुष्य की सन्धियां भार उठाती है।

शिराः–

शिरायें शरीर में सब ओर रस रूपी ओज को ले जाती है इस ओजका के कारण ही सभी चेष्टायें (व्यापार) होता है ।

हदय में रहने वाली सिराएं दस है इन दस सिराओं में वाक,काय मन का व्यापार निश्चित रूप से स्थित है इनके द्वारा ही ओजोवहन होता है (अरूण दत्त)

शिराओं का संस्थानः

मूल में स्थूल एवं आगे अतिसूक्ष्म है वृक्ष के पते की रेखा के प्रतान की भॉति इनका विभाग होता है इस प्रकार ये 700 हो जाती है ।

धमनियों का वर्णनः–

धमनियॉ हृदय से सम्पूर्ण शरीर में रक्त का परिसंचरण करती है । धमनियों से यह शरीर ऊपर से नीचे से और त्रियक रूप में प्रेषित किया जाता है।

- दस धमनियां ऊपर जाती है ।
- दस धमनियां नीचे जाती है ।
- चार– त्रिर्यक (तिरछी जाती) हैं।

ग्रहणीः–

अग्नि का आधार ही ग्रहणी है यह ग्रहणी पक्वाशय द्वार पर भोजन के मार्ग की अर्गला की भान्ति स्थित है। अर्गला अर्थात अपक्व भोजन को पक्वाशय मे आगे जाने से रोकती है ।

ग्रहणी एवं अग्नि का सम्बन्धः–

ग्रहणी का बल अग्नि है और अग्नि भी ग्रहणी से बल पाती हैं इसलिय अग्नि के दूषित होने पर दूषित हुई ग्रहणी रोगों को उत्पन्न करती है ।

अग्नि(जठराग्नि)के भेदः–

अन्न पाचन मं जठराग्नि का महत्व है सम, विषम,तीक्ष्ण एवं मन्द चार प्रकार की होती है ।

समग्नि–

जो अग्नि यथाविधिक खाये भोजन को भली प्रकार पचाती है

विषमाग्नि–

जो अग्नि बिना विधि खाये भोजन को कभी शीघ्र एवं कभी बहुत देर में पचाती है उसे विषमाग्नि कहते है ।

तीक्ष्णाग्नि–

जो खाये गये भोजन का शीघ्र पाचन करती है।

मन्दाग्नि–

जो सविधि खाये भोजन को देर में पचाती है उसे मन्दाग्नि कहते है। जिससे विभिन्न प्रकार के रोग उत्पन होते है ।

देह बलः–

तीन प्रकार का बल मनुष्य में पाया जाता है ।

- **सहज** – जो बल सत्व (मन) एवं शरीर के अनुसार स्वाभवतः होते है वह प्राकृत या सहज बल होता है।
- **कालज**– वय,वल्य, यौवन या ऋतु जन्य बल को कालज बल कहते हैं।
- **युक्तिकष्त** – जो बल आहार बिहार व्यायाम, योग आदि से होता है

  उसे युक्तिकश्त बल कहते है।

देश –

दोष के अनुसार स्थान को देश कहते हैं, तीन प्रकार का है।

- **जांगल देश** – जागंल देश जिस क्षेत्र में पानी वृक्ष,पहाड़ कम हो । वह जांगल देश कहलाता है।
- **आनूप देश** – जिस देश में पानी वृक्ष, पहाड़ ज्यादा हो उसे आनूप देश कहते हैं।
- **साधारण** – जिसमें सभी चीजें समान हो उसे साधारण देश कहते हैं।

मर्मशारीर

शरीर के जिस भाग में विषम (असाधारण) स्पन्दन एवं दबाने से असहनीय पीड़ा होती है उसे मर्म कहते है ।

''**मर्म मारयन्तिति मर्माणि**'' – मरणकारी होने से मर्म कहे जाते हैं।

शरीर के जिन स्थानों पर अभिधात से अधिक कष्ट हो उसे मर्म कहते है। 107 मर्म होते है –

दाहिने पैर में 11

बायें पैर में	11
बायें हाथ में	11
दायें हाथ में	11
कोष्ठ	3
छाती	9
पीठ	14
जत्रु से उपर	37
योग	107

पैर के मर्म–

पैर की तलुवे बीच ये मध्यमा उगली के सामेन तल हृदय मर्म होता है।

- अगुठे एवं अंगुली के बीच – क्षिप्रमर्म
- क्षिप्र से दो अंगुल ऊपर कूर्चमर्म
- गुल्फ सन्धि के बीच में कूर्चशिरमर्म
- जघां एवं पैर के जोड़ पर (घुटने पर) – गुल्फ/मणिवन्धमर्म
- जंघा के बीच में – इन्द्रबंस्ति मर्म
- जघां एवं उरू सन्धि के बीच में – जानु (कूर्पर मर्म)

- जानु के तीन अगुंल ऊपर – आणी मर्म
- उरू के मध्य – उर्वी मर्म
- उरू के मूल – लोहिताक्ष मर्म
- मुष्क एवं वंक्षण के बीच विटप मर्म

कोष्ट मर्म

- **गुद मर्म** :–वायु को बाहर करता है सद्य मर्म प्राण हर है । गुदा को ही मर्म गुद कहते हैं।
- **वस्ति मर्म**– मूत्र के आधार मूत्राशय धनुश के समान टेढ़ा, इसे ही वस्ति कहते है।
- **3.नाभि मर्म** :–पक्वाशय, आमाशय के बीच सब शिराओं का आश्रय, नाभि मर्म है ।

उरोगत मर्म –

- **हृदय मर्म** :–उरकोष्ट के मध्य होता है ।
- **स्तन रोहित मर्म** :–स्तनों से दो अंगुल ऊपर दो मर्म होते हैं जिन्हें स्तन रोहित मर्म कहते हैं।
- **स्तन मूलः**–स्तनों से नीचे दो मर्म दो होते हैं जिन्हें स्तनमूल मर्म कहते हैं।

उपस्तम्भ मर्म :–

छाती के पार्श्व में वायु को ले जानी वाली दो नाड़िया हैं जिन्हें उपस्तम्भ मर्म कहते हैं।

अपलाप मर्म :–

पृष्ठ वंश एवं छाती के बीच में होता है।

पृश्ठवंश के चार मर्म नितम्ब के ठीक ऊपर –2 मर्म । जिन्हें कटिकल सण मर्म कहते हैं।

कुकुन्दर मर्म :–पृष्टवंश के दोनो और कटिपार्श्व में दो सन्धियां जंघा के वहिर भाग में रहती है। 2– मर्म।

1:–नितम्ब मर्मः–मूत्राशय आदि का ढकने वाले –2 मर्म।

2:–पार्श्व सन्धि मर्मः–पार्श्व, जघन मर्म

वृहती मर्म – पृष्ठवंश में –2 मर्म।

अंसफलक मर्म – वाहुमूल में 2 मर्म होते हैं।

अंस मर्म –ग्रीवा, बाहु, सिर –2 ग्रीवा, बाहु एवं शिर में

नीला, मन्या मर्म – कण्ठ नाड़ी के दोनों और 2+2=4

मातृका –कण्ठ नाडी से जिह्वा नासा में –2 मर्म

कृकटिका – सिर एवं ग्रीवा सिन्धयों के –2 मर्म

विधुर – कान के नीचे देव स्थान –2 मर्म

फण मर्म – नासिका मार्ग से श्रोत्र के –2 मर्म

अपांग मर्म – नेत्रों के बाहर – 2 मर्म

शंख मर्म – कान के बगल –2 मर्म

उत्पेक्ष मर्म – बालों के किनारे के पास

श्रृंगाटक मर्म – जिहवा, आंख, श्रोत, नासिका –4

सीमन्त मर्म – पांच सन्धियों (शिर में)

अधिपति मर्म – मस्तिष्क के भीतर सिरा + सन्धि के पास

अस्थि वर्णन

आयुर्वेद मतानुसार अस्थि की उत्पत्ति मेद धातु से मानी गई है – ''**मेदसोऽस्थि प्रजायते**''।

अस्थि धातु का छिद्रमय भाग आकाश महाभूत के कारण है। लघुत्व त्वं रक्तादि की गति वायु महाभूत द्वारा होती है। सुश्रुत में मज्जा को अस्थि के अंर्तगत बताया गया है यही जलीय भाग है। अस्थि का स्वरूप जो प्रत्यक्ष दिखाई देता है वह पृथ्वी महाभूत द्वारा निर्मित होता है।

अस्थि में विशेष भाग पार्थिव, इससे कम वायु और शेष में तीनों महाभूत के भाव है।

षंडग की दृष्टि से अस्थि संख्या आचार्य सुश्रुत मतानुसार

शाखाओं में	120
मध्य शरीर	117
ग्रीवा के ऊपर कुल योग	63
कुल येाग	**300**

आयुर्वेदीय अस्थि प्रकार (पंचविध) संपूर्ण शरीर की अस्थियों के उनके संगठन और आकृति के अनुसार पाँच प्रकार बताये यह है।

1 कपाल

2 रूचक

3 तरूण

4 वलय

5 नलक

कपालास्थि –

जो अस्थियाँ मिट्टी के घडे के टुकडों के समान होती है उन्हे कपालास्थि कहा जाता है।

Patella, Hip bone, Scapula, zygomatic, bone, palatines, temproal, frotal, parietal bone,

रूचक अस्थि :–

ये अस्थियाँ कंधी के आकार की होती है जैसे दाँत।

तरूणस्थि –

ये दो प्रकार की होती है एक वे जो स्वभाव से ही उचित आयु में अस्थि बन जाती है, दूसरी के जो स्वभाब से ही तरूण अवस्था में रहती है। इन अस्थियों में ossification का कार्य पूर्ण नहीं हुआ होता हैं

उदाहरण – नाक, कान, ग्रीवा एवं नेत्र कोष की अस्थियाँ।

वलयास्थि –

जिन अस्थियों में घुमाव हो या कडे के समान गोल हो वे वलयास्वि कही जाती है।

उदाहरण – Ribs, Vertebrae

नलकास्थि–

उपरोक्त चार प्रकार की आस्थियों के अतिरिक्त सभी शेष अस्थियाँ नलकास्थि कही जाती है।

उदाहरण – Humerus, femur, Radius, Ulna, tibia, fibula

आधुनिक मतानुसार – आकार दृष्टि से अस्थियाँ पॉच प्रकार की कही गई है।

1. Long Bone
2. Flat Bone
3. Short Bone
4. Irregular Bone
5. Pneumatic Bone

अस्थियों के कार्य – अस्थियाँ शरीर में निम्न कार्य करती है।

1. शरीर को दृढ़ रखती है।
2. शरीर के आकार को स्थिर रखती है
3. कोमल अंगो की पूर्ण सुरक्षा करती है। मांसपेशियों के उद्‌गम एंव निवेश द्वारा शरीर की प्रत्येक क्रिया का साधन बनती है।
4. इनके अपंर रक्तकणों का निर्माण होता है।
5. दबाव चोट आदि से त्वचा मॉसादि के नष्ट होने पर भी अंगो की आकृति में विशेष अतंर न आने देना।
6. शरीर को स्वरूप प्रदान करना।

संधि –

जब दो या दो से अधिक अस्थियों के सिरे आपस में जहाँ मिलते है उस मेल या संयोग को संधि कहते है।

संधि संख्या – आचार्य सुश्रुत ने शरीर में 210 संधियाँ बताई है।

शाखाओं में		120
मध्य शरीर		68
ग्रीवा के ऊपर		59
कुठ योग़		83
	कुल येाग	210

संधियों के प्रकार एवं भेद – 1 चेस्टवान

2 स्थिर

चल संधि –

जिन संधियों में गति हो सकती है वे चेष्टावान् या चल संधियाँ कहलाती है।

उदाहरण - Shoulder Joint , Elbow joint, Knee Joint, Hip Joint

अचल संधि –

इनमें किसी भी प्रकार की गाति नहीं होती है।

संधियों के अष्टाविध भेद–

1 कोर

2 उलूखल

3 सामुद्ग

4 प्रतर

5 तुन्नसेवनी

6 वायस तुण्ड

7 मण्डल

8 शंखार्वत

1 कोर संधि –

Interphalangeal, Annkle, Knea & Elbow Joint

कोर संधि की गति केवल एक अक्ष्त पर होती है, जिस प्रकार दरवाजे का किवाड़ आगे पीछे होता है।

2 उलूखल संधि –

इस प्रकार की संधियों से ऊखल के समान गड्डा सा बना होता है तथा दूसरी अस्थि का सिरा मूसल के समान गोल होता है जो उसमें फंसा रहता है। इस प्रकार की संधि में सभी प्रकार की गाति की गतियाँ होती है।

उदाहरण - Shoulder Toint, Hib Joint.

3 सामुद्गसंधि–

जो संधिया संपुट के समान बनी हुई होती है उन्हे सामुद्ग कहा जाता है। इस प्रकार की संधि में अल्प चेष्टा होती है।

उदारण – पीठ, गुदा, भग, निवम्ब, अंश की संधियाँ।

4 प्रतर संधि –

इस प्रकार की संधियों में प्रतरण/फिसलन के समान कुछ गति होती है जिसे Gliding movement कहते है।

उदाहरण – ग्रीवा, पृष्ठवंश और कशेरूका के process में होती है।

5 तुन्नसेवनी –

जिस संधि में सीवन के समान संधिबन्धन हो उसे तुन्नसेवनी संधि कहते है।

उदाहरण – कपाल अस्थियाँ

6 वायसतुण्ड –

वायसतुण्ड को काकमुख भी कहा जाता है अर्थात जो संधि कौवे की चोंच के समान हो उसे वायसतुण्ड संधि कहते है।

उदाहरण – Joint between condyle of lower Jow & Temporal bone.

7 मण्डल संधि –

ये संधियाँ मण्डल या चक्र को समान होती है।

उदाहरण – नेत्र एवं क्लोम नाड़ी

8 शंखावर्त –

शंख के भीतरी धुमाव की तरह जो संधि होती है उसे शंखावर्त संधि कहते है।

उदाहरण – श्रोत्र एंव श्रृंगाटक की संधियाँ

आधुनिक मतानुसार संधि प्रकार –

1 अचेष्ट (Synarthrosis)

2 अल्पचेष्ट ;Amphiarthrosis/ Slightly Movable)

3 बहुचेष्ट ;Diathrosis/ truly movable)

स्नायु प्रकार –

1 **प्रतानवती स्नायु** – ये स्नायु लम्बी शाखाओं वाली होती है अतः चारों शाखाओं तथा संधि बंधनों पर होती है।

2 **वृत्त स्नायु** – इन्हे कण्डरा समक्षा जाता है ये भी शाक्षाओं एवं संधियों में होती है।

3 **शुषिर स्नायु** – ये शुषिर स्नायु वास्तव में गोलाकार पेशियाँ ही है। ये पक्वाशय, आमाशयम और मूत्राशय में होती है।

4 **पृथुल स्नायु** – ये स्नायु अधिक फैले हुए एंव पतली तह पाले होते है। ये पार्श्व वक्षस्थल, पीठ एवं सिर में होते है।

स्नायु संख्या –

शाखाओं में		600
मध्य शरीर		230
ग्रीवा के ऊपर		70
कुठ योग़		900

स्नायु के कार्य –

1 स्नायुओं के जाल मांसपेशियों में फैले रहते है जिनसे उनकी संकोच एवं प्रसारण क्रिया में सुविधा बनी रहती है।

2 स्नायु बंधन से ही हमारा शरीर दृढ़ रहता है।

3 स्नायु के आधार पर शरीर भारी भार उठाने में समर्थ होता है।

4 स्नायु शरीर के प्रत्येक भाग को एक दूसरे से जोड़ने में सहायक होते है।

5 स्थान, आकार आदि के भेद से शरीर के प्रत्येक भाग से होने वाले कार्यो में सहायक होते है।

स्नायु का महत्व –

1 सभी स्नायु देह में मांस, अस्थि भेद और संधियों के बंधन है अतः शिराओं की अपेक्षा ये सुदृढ़ कहे गत है। अतः इनका विशेष महत्व है।

2 सभी संधियों स्नायुओं द्वारा बंधाी होने से भार बहन करने में समर्थ होती है।

3 स्नायुओं द्वारा ही अस्थि में मोड़ या घुमाव हो सकता है।

4 स्नायु ज्ञान पर ही कोई शल्य चिकित्सक, शल्य को शरीर से बाहर निकालने मे समर्थ होता है। अतः शल्य शास्त्र में भी इनका बहुत महत्व देखा जाता है।

5 स्नायुओं की पीड़ित स्थान में बहुत पीड़ा हेाती है। मोच इतनी सरल बीमारी होते हुए भी महीनों तंग करती है और कभी–कभी तो जिस अंग में मोच आ जाती हैं वह काम करना ही बंद कर देता है अतः स्नायु का अस्थि, संधि पेशी आदि की अपेक्षा 'विशेष महत्व' है।

''शिरा विज्ञान''

शिरा शब्द का अभिप्राय उन सभी प्रणलियों से है जो शरीर के रक्त को हृदय की तरफ लेजाती है, यह सम्पूर्ण शरीर में फैली हुई है। तथा अशुद्ध रक्त का वहन करहने वाली समुद्र है।

सिराओं की उत्पत्ति :–

प्राणि के शरीर में जितनी सिरामें उत्पन्न होती है। वे सब नाभि से सम्बन्ध रखती हुई चारों और फैलती है।

नाभि आश्रित है। जैसे पहिरों का मध्य भाग चारों और से घिरा रहता है, वैसे ही सिराओं से नााभि आवृत रहती है।

सिरा स्वरूप :–

सिरा स्वरूप का वर्णन करते हुए सुश्रुत में लिखा है कि जैसे जलहारिणियों द्वारा उपवन का और क्यारियों द्वारा खेत का सिंयन और पोषण होता है, उसी प्रकार सिराओं के आंकुचन और प्रसारण द्वारा शरीर का उपस्नेह और परिपालन होता है।

इनके अनेक प्रतान हेाते है इनका उद्‌गम स्थान नाभि है और वहीं से सारे शरीर में फैलती है।

सिराओं की संख्या :–

वात वहा सिरा – 10

पितवहा सिरा – 10

कपवहा सिरा – 10

रक्तवहा सिरा – 10

विध्य सिरायें :–

शरीर में कुछ ऐसी सिरायें भी है जिनके वेध होने से विकलता अथवा मृत्यु होती है।

अतः वेध करते समय इनका भी ज्ञान होना चाहिए। इस प्रकार षड़ंग शरीर में 98 होती है, जिनका वर्णन इस प्रकार है।

- शाखाओं में कुल – 400
- कोष्ठ में – 136
- ग्रीवा में – 164

उनमें कुल अवेध्य सिराये भिन्न है।

- शाखाओं में – 32
- जत्रु के ऊपर – 50
- कुल – 98 अवेध्य सिराये

धमनी शरीर

सामान्य रूप से धमनी शब्द से अभिप्राय सम्पूर्ण शरीर में शुद्धरक्त की बहाने वाली प्रणाली से है। इन सभी का मूल स्थान हृदय धमनियों के द्वारा ही सम्पूर्ण शरीर में शुद्ध रवत का संचार करता है।

धमनी की व्युत्पत्ति :–

'धमन' के साथ गति करने वाली तथा जो शुद्ध रक्त के साथ शरीर का पूरण और पोषण करती है वे धमनियां है।

धमनियों के प्रकार –

1 सुषिर धमनी

2 असुषिर धमन

धमनी का अर्थ प्रसंगानुसार किया जाये तो हृदय से निकलने वाली सुषिर धमनी और मस्तिष्क से निकलने वाली नलियों को असुषिर धमनियों कहा जा सकता है। भाषान्तर में कहीं–कहीं नव का उल्लेख आता है।

धमनी संख्या

हमारे शरीर में कुल 24 धमनियों होती है, उनको तीन भागों में विभक्त किया गया है।

1 उर्ध्वगामी धमनियां –10

2 अधोगामी धमनियां – 10

3 तिर्यग्गामी धमनियां – 4

हृदय से सम्बन्धित 10 धमनियां आधुनिक दृष्टि से इस रूप में प्रकट की जा सकी है।

1 महाधमनी – सम्पूर्ण शरीर में रक्त भेजने वाली

2 दक्षिण आलिन्द – मध्यकपालीय प्रकोष्ट

3 उत्तरा महांसिरा – शरीर के रक्त को हृदय में ले जाने वाली

4 अधरा महांसिरा – (Inferior vena cava) शरीर के रक्त को हृदय में ले जाने वाली

5 वक्षवाहिनी –(Thoracic Duct) सोम्यरस को हृदय से निकालने वाली

6 दक्षिण निलय –(Right Ventrical) हृदय प्रकोष्ट

7 फुफ्फुसीय धमनी - (Pulmonary Arteries)

8 वाम आलिनन्द -(Left Atrium)

9 फुफ्फुसीय सिरा -(Pulmonary venis)

10 वाम निलम - (Left ventrical)

सिरा धमनी एंव श्रोतस् में अन्तर –

विभेदकमत	सिरा	धमनी	स्त्रोतस्
लक्षण भिन्नता	वातादि को वहन करने से अरूण नील एवं शुक्ल रंग की होती है।	यह शब्दादि को वहन करने वाली होने से वर्ण का उल्लेख नही किया गया है।	विभिन्न धातु एंव मलो का वहन करने वाले होने से उन्ही के अनुरूप विभिन्न वण्र होते है।
संख्याभिन्नता	इसकी मूल सिराये 40 होती	मूलधमनियों 24 है तथा शाखाओं में विभक्त होकर अंसख्या हो जाती हैं	मूल स्त्रोत 11 है एवं भेद रूप में 22 हो जाते है चरक ने 11 प्रकार बताये है
कर्मभिन्नता	ज्ञानेन्द्रियों के विषय का ज्ञान करना, प्रसारण आंकुन्यन एवं सभी धातुओं का पोषण करना	शब्द स्पर्श, रूप, रस, गन्ध को वहन करना जल मूत्र शुक्र आर्तव का वहन करना।	धमनियों के समान स्त्रोतस् प्राण, उदक, रस रक्त, मांस आदि के परिणाम प्राप्ति के पश्चात् वहन करते है।
शास्त्र प्रमाण से	शास्त्रों में सिराये धमनियों से पृथक बतायी गई है।	धमनियों का वर्णन भी सिराओं से पृथक किया गया हैं	शास्त्र प्रमाण से सिरा एवं धमनी से स्त्रोतस पृथक है।

		यह स्पन्दनयुक्त होती है।	
स्पन्दन कृत भेद	यह स्पन्दनरहित होती है।	यह स्पन्दनयुक्त होती है।	स्त्रोतस में श्रवण कर्म होता है, सिरा एंव धमनी की अपेक्षा धातु वहन कर्म शीघ्रता से होता है।
सम्बन्ध भिन्नता	इसका सम्बन्घ अपने –अपेन आशयों से है तथा नाभि से निबद्ध है।	इनका सम्बन्ध हृदय से है एंव निबद्ध नाभि से है।	इसका सम्बन्ध अपने–अपने धातु एवं मलों से है।
आकार	यह आवकाशयुक्त होती है।	यह नाली के समान अवकाश युक्त सुषिर वस्तु है।	स्त्रोतस् भी अवकाशयु सुषिर अवयव है।

कोष्ट एवं आशय शरीर

आठ अवयवों (आशयों) को एक जगह मिलाकर मिलाकर उनकी कोष्ठ संज्ञा दी गई है।

आमाशय, अग्न्याशय, पक्वाशय, मूत्राशय, रूधिराशय, उण्डुक और दोनों फुफ्फुस इनको 'कोष्ठ' नाम से कहा गया है।

महासोतस् शरीर का मध्यम भाग, महानिम्न आमाशय और पक्वाशय हैं इन्हे कोष्ठ भी कहते है।

शरीर के अवकाश स्थान कोष्ट नाम से बताये गये धमनियों के समान श्रोतस् प्राण, उदक, रस,

रक्त, मांस आदि के परिणाम प्राप्ति के पश्चात वहन करत है। धमनियों के समान सोतस् प्राण, उदक, रस, –

रक्त मांस आदि के परिणाम प्राप्ति के पश्चात वहन करत है। Abdominal Pelvic तथा thoracic cavites को कोष्ठ कहा जाता है।

आशय शब्द की व्याख्या :–

लक्षण –

1 जिसमें कोई वस्तु आश्रय लेकर रहती हो उसे 'आशय' कहा जाता है।

2 दोषो के अधिष्ठान्न अर्थात जिनमं दोषादि विशेष रूप से रहते हों उन्हें आशय कहा जाता है।

3 जो आकाश युक्त अवयव हो उन्हें आशय कहा जाता है।

आशय भेद –

आधुनिक दृष्टि से श्री गणनाथ जी ने आशयों का वर्गीकरण इस प्रकार किया है।

1 सगर्भ आशय– जिनमें शून्य स्थान होता है।

2 अगर्भ आशय– जिनमें शून्य स्थान नहीं होता

सगर्भ आशय को पुनः दो भागो में विभक्त किया गया है।

1 महागर्भाशय – इनमें आमाशय, पक्वाशय, मूत्राशय गर्भाशय आदि की गणना की गई है।

2 अल्पगर्भाशय 7 वृक्क मस्तिष्क आदि, इनमे शून्य स्थान अल्प है, अनेक छोटे–छोटे शून्यगर्भ शुल्क होने से दोनो फुफ्फुसों को भी अल्पगर्भाशय कहा जाता है।

अगर्भाशय –

यकृत प्लीहा आदि

सुश्रुत अ0 हृदय और शार्ड़गधर के अनुसार आशय गणना

1 वाताशय

2 पिताशय

3 श्लेष्माशम

4 रक्ताशम

5 आमाशय

6 पक्वाशय

7 मूत्राशम औहर स्त्रियों में 8वॉ गर्भाशय अधिक होता है।

शाड्.र्गधार स्त्रियों में गर्भाशय के अतिरिक्त 2 अतिरिक्त और अधिक माने है। जिन्हे स्तन्याशय कहा गया है।

वाताशय स्थान एवम् कार्य :–

वात हमारे सम्पूर्ण शरीर में रहता है फिर भी इसके दो विशेष अधिष्ठान बताये है।

1 फुफ्फुस

2 पक्वाशय

पित्ताशय :–

वात की तरह पित्त भी सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त रहता है फिर भी स्थान विशेष से इसका धी अपना पित का स्थान यकृत और अग्न्याशम समझना क्योकि इन दो स्थानों में पित्त पाया जाता है।

श्लेष्माशय :–

जिस प्रकार वात पित्त सारे शरीर में रहते है फिर भी उनका निश्चित आश्रय होता है उसी प्रकार श्लेष्मा या कफ भी सारे शरीर में रहते हुए इनका भी स्थान निश्चित होता है, छाती में विशेषकर फुफ्फुस को श्लेष्माशव कहा गया है।

रक्ताशय –

यकृत और प्लीहा को आयुर्वेद का रक्त स्थान माना गया है। रक्ताशय से यकृत और प्लीहा को समझना चाहिए।

आमाशय परिभाषा :–

जहां पर सेवन किया हुआ अपक्व अन्न रहता है उसे जठर कहते है। शाड़र्गधट में श्लेष्माशय से नीचे आमाशम की स्थिति बताई गई है।

पक्वाशय :–

जहां पर अन्न का का पाम्पन होता है, वह महा श्रोत का सबसे लम्बा भाग अर्थात् आन्त्र है। इसमें स्थूल ओर क्षुद्र दोनों का समावेश होता है, पक्वाशम से साधारणतया स्थूलान्त्र का बोध होता है।

मूत्राशय :–

जहां पर मूत्र संचित होता रहता है या जो मूत्र का अधिष्ठान हेाता है उसे मूत्राशय 'या बस्ति' कहते है।

गर्भाशय :–

योनि में शंख के समान आर्वत होते है। उन आर्वतो के तीसरे आर्वत में गर्भाशय होता है शरीर का वह अवयव जिसमें गर्भ आश्रय लेकर रहता है गर्भाशम कहते है। यह Pelvic cavity में होता है।

स्तन्याशय

सुश्रुत एवं चरक के उपरान्त आठ आशयों के अतिरिक्त शाङ्धर में दो स्तन्याशय अधिक बताये है।

कूर्च

परिभाषा :– पेशी स्नायु, धमनी, सिरा मांसपेशी एवं अस्थि के सन्निपात कूंची के समान दिखाई देते है उसे कूर्च कहते है, अर्थात कुशांपुच्छ के समान पदार्थ को कूची कहते है ये लाल तेजस्वी होते है।

इनकी कुल संख्या 6 बताई गई है इनमें स्नायु सन्निपात पांच है हाथ में दो जो कक्षा में होते है, पांव में दो जो वंक्षण प्रदेश में होते है, ग्रीवा में एक होता है, धमनी सन्निपात मेढ्र (लिंग) में एक होता है।

कण्डरा – (Big cord like fibrours structures - tendornsor Nervè)

परिभाषा :– अंगों का संकोच विस्तार करने वाली बड़ी स्नायुओं का कण्डरा कहते है,

कण्डरा संख्या में 16 होती है, इनमें पैरो में चार, हाथों में चार अभिनव शरीर में इन्हे Big cord like pibrous structure, tendons or nerves कहा जाता है।

उत्पत्ति :–

ग्रीवा की कण्डराओं का उपरिगत प्ररोह मस्तक है, हाथों की कण्डाओं की उत्पति बाहुशिर है। पैरो की कण्डराओं की उत्पत्ति उरूमझउल या श्रोणिमण्डल है। पृष्ठ की कण्डराओं का उपरिगत प्ररोह मस्तक है, हाथों की कण्डराओं की उत्पति पृष्ठ की कण्डराओं की उत्पत्ति या उपरिगत प्ररोह नक्षमण्डल है। हाथों में कोहनी में पांवों में घुटनों की नीचे गर्दन के दोनों तरफ तथा पीठ ये कण्डराएं स्पष्ट दिखाई देती है। आधुनिक दृष्टि से इन्हे पेशी झाग भी मानते ह। पांवों में घुटनों के नीचे की कण्डरा, जो पावों को चलाने में सहायक होती है इनके विकृत हो जाने सूख जाने या नष्ट हो जाने पर घुटनों के बीच अनुभव होने वाला कड़ा भाग प्रतीत नहीं होती , ऐसे व्यक्ति उठने बैठने चलने पांव उठाने मे कठिनाई अनुभव करते हैं या बिल्कुल बैठ जाते है।

जाल

शरीर में जाल जैसी रचनाओं के लिए यह शब्द प्रयुक्त किया जाता है, आधुनिक दृष्टि से इन्हे Reto, Plexus, Network कहा जाता है।

परिभाषा :– शरीर के जिस विशेष स्थान पर मांसपेशी, सिराएं, स्नायु हुई हों जहां इनका संयोग होता है वह स्थान छिद्रित हो जाता है सिरा, स्नायु, मांसपेशियों और अस्थियों से निर्मित होकर एक–एक स्थान चार चार जाल होते है।

इस प्रकार इनकी संख्या 16 होते हैं इस प्रकार चार–चार जाल दोनों कलाई एवं टखनों में होते है। आधुनिक दृष्टि में । typical arrangment of muscles, vessels, ligaments, verves, tendons and bones in carsal and tarsal regions

अस्थियों के परस्पर मेल का नाम संघात है, यह अस्थि सन्धियाँ का एक विशिष्ट रूप है।

श्री घाणेकर जी लिखते है कि श्लेष्मल त्वचा को Raphe या Ridge कहते है। जिव्हासेवनी जिव्हा के अधस्तल पर उसके अग्र से मूल तक होती है। यह Rapne कहलाती है। लिंग की सेवनी लिंग पर नहीं होती इसका प्रारम्भ शिश्न के नीचे उसके मूल से होता है। तथा वृषण कोष पर से होकर गुदद्वारा तक चली जाती है, गुदा के दूसरी तरफ से होती हुई coccyx के अग्र तक पहुंचकर समाप्त होती हैं अतः गुद द्वार तक का पूर्व भाग वृषण सीवनी (Raphe of the Scrotam) तथा पीछे का भाग गुदानुत्रिक सीवन (Anocoygeal raphe) कहलाता है।

सिर की अस्थियों की सीवन बहुत है। किन्तु यहाँ जो संख्या बताई गई हैं वे करोटि के ऊपर के आग की जो साफ दिखई पड़ती है।

इनमें

1 गूढ़ सीवनी यह बचपन में मिलती है तथा आगे चलकर नष्ट हो जाती है।
2 पुरा सीवनी यह पुरः कपाल एंव पार्श्व कपालों के मध्य होती है।

3 पश्चिम सीवन यह पश्चिम कपाल एवं पार्श्वो के मध्य होती है।

4 मध्य सीवनी यह दो पार्श्व के कपालो के बीच सिर के मध्य में होती है।

शरीर में अस्थियों के सधात 14 होते हैं इनमे टखना, जानु एंव वंक्षण में तीन होते है। इसी प्रकार दूसरे पैर तथा दोनों हाथों में तीन–तीन होते है। त्रिक प्रदेश एवं सिर पर एक एक है। जैसे गुल्फ सन्धि में सात अस्थियों से Trasal बनता है।

तथा हाथ की कलाई में Carpal बनता है। यह अस्थि संघात है।,

1 Particalar Clamps of the bones and bony process as inamkle, knee, hip. wrist, elboshoulder, sacrum, and srkill ‘

2 Ico lumbo saclalregion, middle thorex, cartal arch and acromical region.

सीमन्त

सीमन्त की अस्थि संधात के समान 14 होते हैं क्योंकि अस्थि संघातों से युक्त सीमन्त होते है।

परिभाषा – दो या दो से अधिक अस्थियों के प्रान्त या किनारे जहां आकर मिलते है वह सीमन्त कहलाता है।

अभिनव शरीर में – Lines or suturs, indicating union or articulation of particular clumps of the bones.

''सेवनी''

समस्त शरीर में जो अवयव पस्पर सीवन (सुई के समान मिले हुए) के समान जुडे हुए होते है वे सीवनी कहलाती है।

शरीर में सेवनी सात है। इनमें माथे में 5 है। लिंग में एक जीभ में एक है, इनका कभी वेध नहीं करना चाहिएं

विशेष विवरण – ये सीवन त्वचा तरूणस्थियेां एवं श्लेष्मक त्वचा एंव अस्थियों में पाये जाते है। शिश्न की सेवनी त्वचा की जिव्हा की श्लेष्मक त्वचा की तथा सिर की अस्थियों की है।

पार्श्व सीवनी –

यह पुरः पार्श्व एवं पश्चिम कपालों के बीच की अस्थियों के संयोग स्थान पर होती हैं इसके सीमन्त भी कहते हैं। दामोदर शर्मा गौड़ ने इनके लिए आधुनिक नाम इस प्रकार दिये है –

Coronal, Saggetal, Lamboid and two temporo periatal or lateral suturs, lingual, and perineal raphae

रज्जू

पोशियों की कोरी के समान जो रचनाएं पृष्ठ में होती है। उन्हे रज्जू कहते है। इन्हे मांस रज्जू भी कहते है। ये संख्या में चार है। पृष्ठवंश के दोनों और पेशियों को बांधने के लिए भीतर तथा दो बाहर है।

आधुनिक दृष्ट्य रज्जू को Long musculo tendinous band or sacrospinalis muscle कहना चाहिए।

इकाई – 2

आहारीय अभाव जनित विकार

विटामिन एवं खनिज लवण

विटामिन

कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन तथा स्नेह के अतिरिक्त आहार में कुछ ऐसे कार्बनिक यौगिकों की आवश्यकता होती है और स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त आवष्यक होते हैं। इनको जीवन के लिए जैव मानते हुए विटामिन नाम दिया गया।

विटामिनों में ऊर्जा उत्पन्न करने की शक्ति नहीं होती है, परन्तु उत्पन्न ऊर्जा को कार्य रूप में परिणित करने तथा चयापचय क्रिया को नियमित प्रकार से होते रहने के लिए इनकी आवष्यकता अनिवार्य है। इस समय तक के ज्ञात विटामिन दो वर्गों में बाँटे गये है :

1. स्नेह विलेय तथा

2. जल विलेय विटामिन। यह वर्ग विभाजन अन्त्र में अवशेषण तथा चयापचयन की दृष्टि से हैं।

;पद्ध विटामिन ए, डी, इ, तथा के, ये चारों विटामिन स्नेह में विलेय तथा जल में अविलेय होते हैं और विटामिन बी कॉमप्लेक्स (थायमीन, निकोटिनिक अम्ल, रीबोफ्लेविन अम्ल, पेन्टोथेनिक अम्ल, पायरीडॉक्सिन, सायनोकोबेलेमीन, फोलिक अम्ल आदि) तथा विटामिन सी जल में विलेय तथा स्नेह में अविलेय होते हैं।

<u>विटामिन ए</u>

यह वनस्पतियों में बीटाकैरोटीन के रूप में मिलता है।वायु के अभाव में गर्म करने से यह नष्ट नहीं होता है। इस विटामिन की 0.3 म्यू ग्राम मात्रा अन्तर्राष्ट्रीय मानक (मात्रक = यूनिट) कहलाती है।

कार्य– (1) शरीर की वृद्धि के लिए आवश्यक है।

(2) शरीर की विभिन्न ग्रन्थियों तथा उपकला ऊतक की पूर्णता एवं कार्य कुशलता बनाए रखता है तथा उनमें संक्रमण को रोकता है।

(3) प्रोटीनों के संश्लेषण में सहायक होता है।

(4) नेत्र तन्त्रिका के शलाका में उपस्थित रोडाप्सिन के निर्माण में विषेष भाग लेता है। इसके अभाव में रोडाप्सिन का निर्माण नहीं हो सकता है और फिर दृष्टि मन्द प्रकाश में कार्य नहीं करती है।

(5) अस्थि कोशिकाओं के निर्माण को नियन्त्रित करता है, जिस कारण उनकी वृद्धि सामान्य होती है और आकार भी सामान्य रहता है।

(6) श्लेष्मा के निर्माण में भाग लेता है।

(7) प्रजनन शक्ति को बनाये रखने में सहायक होता है।

(8) कैल्श्यिम फॉस्फेट से मूत्राष्मरी के बनने को रोकता है।

विटामिन ए की न्यूवता से उत्पन्न लक्षण–

(1) शारीरिक वृद्धि में अवरोध होता है।

(2) मन्द प्रकाश में तथा रात्रि में दिखाई नहीं देता है।

(3) अश्रु ग्रंथियों का व्यपजनन हो जाता है।

(4) नेत्र शुष्क द्युतिहीन हो जाते हैं। इस दशा को जीरोथ्थैलमिया कहते हैं। चिकित्सा के अभाव में कार्निया का कैरेटिनीकरण तत्पष्चात व्यपजनन हो जाता है। इस प्रकार व्यक्ति अन्धा हो जाता है।

(5) **उपकला ऊतक** पर प्रभाव–

;पद्ध त्वचा मोटी हो जाती है, उसका कैरेटिनीकरण हो जाता है और उसमें पुटकीय उभार हो जाते हैं। इस प्रकार त्वचा टोड मेंढक के समान खुरदरी हो जाती है।

;पपद्ध पोषण मार्ग में उपस्थित ग्रन्थियाँ तथा उपकला व्यपजनन कर जाती है।

;पपपद्ध **वृक्क तथा मूत्र** मार्ग की उपकला का भी व्यपजनन हो जाता ह। यदि आहार में कैल्शियम अधिक है तो कैल्शियम फॉस्फेट से मूत्राश्मरी बनने की सम्भावना हो जाती है।

;पअद्ध उपकला के व्यपजनन होने से व्यपजनित भाग सरलता से सवंमित हो जाते हैं।

दैनिक आवष्यकता– सामान्यतः 5,000 अ0मा0 प्रतिदिन आवष्यकता होती है। गर्भवती एवं स्तनपान कराने वाली स्त्रियों को तथा यौवनारम्भ पर इसकी आवष्यकता अधिक 5,000 से 8,000 अ0 मा0 तक होती है। बच्चों को 2000 से 3500 अ0 मा0 तथा शिशुओं को 1500 अ0 मा0 की आवष्यकता होती है।

अधिक सेवन से हानियाँ– इस विटामिन का निरन्तर अधिक मात्रा में सेवन करने से निम्नलिखित लक्षण प्रकट हो जाते हैं।

(1) निद्रालता कार्यों में मन्दता।

(2) सिर से पीड़ा।

(3) वमन।

(4) भार में कमी।

(5) त्वचा की अपुष्टि एवं श्षोष

(6) केशें का झड़ना।

(7) नेत्रों के व्रण।

(8) अस्थियों का डिकैल्सीभवन, जिस कारण अस्थिभंग की सम्भावना रहती है।

(10) प्लाज्मा में प्रोथ्रॉम्बिन की कमी तथा ऊतकों में विटेमिन 'सी' की कमी हो जाती है।

विटेमिन एं के सेवन को बन्द कर विटेमिन 'सी' तथा 'के' लेने से उपरोक्त विकृतियों को सुधारा जा सकता है।

विटेमिन 'डी'

स्नेह में विलेय तथा जल में अविलेय यह विटामिन उष्णता को सहन कर सकता है। कॉड तथा हेलीबुट मछलियों के यकृत तैल में सर्वाधिक मिलता है। इसके अतिरिक्त मक्खन, घी, दूध, अण्डा तथा सामान्य मछलियों के यकृत आदि से प्राप्त होता है।

दो प्रकार के विटामिन 'डी' मिलते हैं। डी2 यह निम्न श्रेणी की वनस्पतियों तथा फंगाई, किण्व में उपस्थित अर्गोस्टेरॉल पर अल्ट्रावॉयलेट किरणों की प्रतिक्रिया से प्राप्त होता है तथा डी3 यकृत–तैलों, अण्डों तथा मक्खन मे उपस्थित रहता है। प्राणियों की त्वचा के नीचे

हाइड्रोकोलेस्टरॉल होता है, जिस पर परानील लोहित किरणों के प्रभाव से विटामिन डी3 उत्पन्न होता है।

एक मिलीग्राम विटामिन डी में 40,000 अ0 मा0 मान लिये गये हैं।

कार्य– (1) अन्त्र के कैल्शियम तथा फॉस्फेट के अवशेषण को बढता है।

(2) कैल्श्यिम तथा फॉस्फेट के अस्थि निर्माण कार्य में सहायक होता है।

(3) दाँतों के विकास में सहायक होता है। इनकी कमी से दाँतों का निर्माण सम्यक् प्रकार से नहीं होता है।

(4) रक्त तथा अस्थियों में कैल्श्यिम का सन्तुलन बनाए रखता है।

(5) मूत्र द्वारा फास्फेट के उत्सर्जन को प्रभावित करता है।

विटामिन डी की कमी से हानि :

(1) कैल्श्यिम तथा फॉस्फेट का अन्त्र में अवशेषण नहीं होने से वे पुरीष द्वारा षरीर से निष्कासित हो जाते हैं।इस कारण श्शिुओं की अस्थियों के निर्माण में कैल्श्यिम एवं फॉस्फेट के पर्याप्त मात्रा में प्राप्त नहीं होने से अस्थियाँ कोमल रहती हैं। श्षरीर के भार के कारण टाँगों की अस्थियाँ अन्दर या बाहर की ओर मुड़ जाती है। वक्ष, श्रोणि में अस्थि भवन के सामान्य न होने से कुरचना हो जाती है। 6 मास से 18 मास के बच्चों में ऐसा होता है। इस दश को रिकेट्स कहते हैं।वयस्क में विटामिन डी की न्यूनता में अस्थि मृदुता दश हो जाती है।

दैनिक आवष्यकता– एक वर्ष तक के श्शिुओं के लिए 400 अ0 मा0, 20 वर्ष की आयु तक के बच्चों को 400 म0 आ0 एवं साथ में कैल्श्यिम तथा फॉस्फेट की पर्याप्त मात्रा लेनी चाहिये। गर्भवती स्त्री को 400–800 अ0मा0 लेते रहना चाहिए। वयस्कों को 250 अ0 मा0 पर्याप्त है।

विटामिन डी की अधिक मात्रा लेने से हानियाँ :

इस विटामिन की लगातार अधिक मात्रा लेते रहने से–

(1) श्षरीर का भार कम हो जाता है।

(2) मूत्र में कैल्श्यिम तथा फॉस्फेट का उत्सर्जन कम हो जाता है एवं रक्त में कैल्श्यिम की मात्रा बढ़ जाती है, जिससे वह वृक्कों, हदृय तथा धमनियों में निक्षेप कर जाता है।

(2) उत्कलेश, वमन, सिरदर्द तथा निद्रालुता के लक्षण प्रकट हो जाते है।

विटामिन ई

यह विटामिन स्नेह में विलेय होता है परन्तु ऊष्मा से अप्रभावित रहता है। 2000ब तक गर्म करने पर भी नष्ट नहीं होता है। इसे टोकोफिरॉल भी कहते हैं। यह श्षब्द ग्रीक भाषा का है, जिसका अर्थ है जवावे त्र बीपसक इपतजीए चीमतं त्र जव इमंतए वस त्र ंसबवीवस अर्थात् बीपसक इपतजी इमंतपदह ंसबवीवस (बन्ध्यताहर विटामिन)।

प्राप्ति– यह विटामिन लगभग सब खाद्य पदार्थों में होता है। यह हरी सब्जियाँ, अन्न, यकृत, अण्डे की जर्दी आदि। सबसे अधिक अंकुरित गेहुँओं में होता है। सोयाबीन तथा मक्का के तेलों में भी होता है।

कार्य– (1) अपने प्रतिऑक्सीकारक गुण के कारण श्षरीर में अनावष्यक ऑक्सीकरण को रोकता है।

(2) पेशियों के सामान्य कार्य के लिये आवष्यक है क्योंकि यह पेशियों एवं तन्त्रिकाओं के एन्जाइमों को नष्ट होने से बचाता है।

(3) बन्धयता को रोकता है।

(4) गर्भ के विकास के लिये आवश्यक एन्जाइमों की सहायता करता है।

(5) गन्धक वाली एमीनो अम्ल यथा मिथियोनिन, सिसटिन आदि की कमी से होने वाले यकृत परिचलन को रोकता है।

दैनिक आवश्यकता– 15 से 20 मिलीग्राम पर्याप्त होती है।

कमी का प्रभाव :

(1) गर्भाशय में गर्भ श्शिु की मृत्यु हो जाती है।

(3) पेशियों का श्षोष हो जाता है।

(4) जननिक उपकला में परिवर्तन हो जाता है।

विटामिन के

रक्तस्त्रावरोधी कारक

यह विटामिन स्नेह में विलेय तथा ऊष्मा से अप्रभावित है। अन्त्र में अवशौषण के लिये अन्य स्नेह घुलित विटामिनों के समान इस विटामिन को भी पित्त लवणों की आवष्यकता होती है। अल्ट्रा वॉयलेट किरणों द्वारा यह विटामिन नष्ट हो जाता है।

कार्य– (1) यकृत में प्रोथ्रॉम्बिन नामक प्रोटिन तथा रक्त स्कन्दन के सातवें कारक के निर्माण के लिये आवश्यक है।

(2) रक्त स्कन्दन के समय कुछ एन्जाइमों के लिये यह सहायक एन्जाइम का कार्य करता है।

(3) ऑक्सीकारक फॉस्फोरिलीकरण के लिये यह विटामिन आवष्यक होता है।

रक्त में कमी का प्रभाव– रक्त स्कन्दन तथा रक्तस्त्राव दोषपूर्ण हो जाता है।

दैनिक आवष्यकता– सामान्यतः इसकी कमी नहीं होती है, परन्तु रक्त स्त्राव रोग में 5 मिली ग्राम दैनिक पर्याप्त होता है।

जल विलेय विटामिन

विटामिन बी1 कॉम्प्लेक्स

इस वर्ग में अनेक विटामिन होते है। यहाँ पर केवल मनुष्य के लिये उपयोगी विटामिनों का वर्णन दिया जा रहा है।

थायमिन, विटामिन बी1,

श्षुष्क अवस्था में यह विटामिन बहुत स्थायी होता है। ऊतकों में यह विटामिन फॉस्फेट से संयुक्त होकर डाइफॉस्फोथायमीन, जिसे थायमिन पायरोफॉस्फेट कहते हैं, बनाता है। इस रूप में यह साइट्रिक चक्र में को–एन्जाइम का सहायक होकर चयापचय में भाग लेता है। अतः इसकी कमी चयापचय मे बाधा डालती है।

(2) कार्बोहाइड्रेट तथा प्रोटिन से स्नेह बनाने वाले एन्जाइमों की भी यह सहायता करता है।

थायमिन अल्पता द्वारा उत्पन्न लक्षण

(1) बेरीबेरी नामक रोग होता है। बेरीबेरी दो प्रकार का होता है :– ;पद्ध शुष्क तथा ;पपद्ध आर्द्र बेरीबेरी।

;पद्ध **शुष्क बेरीबेरी**– इस विटामिन की अल्पता से तन्त्रिका तन्त्र में विकार उत्पन्न हो जातो हैं। यदि शरीर में काफी समय तक इसकी कमी रहती है, तो शुष्क बेरीबेरी के लक्षण प्रकट होते हैं। इसके लक्षण हैं– थकावट, कमजोरी, भूख न लगना आदि लक्षण प्रकट होते हैं एवं टाँगों में सुन्नता और सुरसुराहट होने लगती है। टाँगों की पेशियां मुलायम हो जाती हैं

जिसमें बैठकर उठने मे दिक्कत होती है, यदि उपचार नहीं किया गया तो टाँगों तथा बाँहों में पूर्ण घात हो जाता है। संवेदी तथा प्रेरक तन्त्रिकाओं में विकार उत्पन्न हो जाता है तथा प्रतिवर्त किया नष्ट हो जाती है।

;पपद्ध **आर्द्र बेरीबेरी**– इसमें बहुतन्त्रिका शोथ तथा शोफ हो जाता है। इसमें शोफ मुख्य है। हृदय गति कम हो जाती है परन्तु जरा सी मेहनत पर हृदय की धड़कन बढ़ जाती है। ह्रद–विस्फरण हो जाता है और चिकित्सा के अभाव में ह्रदपात से मृत्यु सम्भव है।

;पपपद्ध यदि अल्पता अधिक समय तक बढती रहती है तो मस्तिष्क की तन्त्रिका कोशिकाओं में अपरिवर्तनीय विकृति हो जाती है।

दैनिक आवश्यकता– इस विटामिन की 0.3 म्यू ग्राम मात्रा अन्तर्राष्ट्रीय मात्रक मानी जाती है। बच्चों को 0.4 मिली ग्राम से 1.0 मिली ग्राम तथा वयस्क को 1.0 मिली ग्राम पर्याप्त है। गर्भवती माताओं, दूध वाली माताओं तथा शारीरिक परिश्रम करने वालों को अधिक मात्रा की आवश्यकता होती है।

रोबोफ्लेविन

यह पीले नारंगी रंग का यौगिक है। प्रकाश तथा क्षारीय माध्यम में नष्ट हो जाता है। अतः धूप में रखे हुये दूध में ही नहीं मिलता है। वृहदन्त्र में बैक्टीरिया भी इसका निर्माण करते हैं।

प्राप्ति– गेहूँ आदि अन्न, हरी सब्जियों, दूध, यकृत, वृक्क, मांस, अण्डों आदि में मिलता है।

कार्य– (1) शरीर की वृद्धि के लिये आवश्यक है।

(2) ऊतकों में मोनो तथा डाइन्यूक्लियोटाइड के रूप में अनेक एन्जाइमों विशेष रूप से ऑक्सीकारक एन्जाइमों के कार्यों में सहायक है।

(3) एसिटिल को–एन्जाइम के सहायक के रूप में वसा अम्लों के ऑक्सीकरण को प्रारम्भ करता है।

(4) प्रोटिन के चयापचय से भी सम्बन्धित रहता है।

अल्पता का प्रभाव :

(1) ओष्ठों के कोनों में ओष्ठ विदरता। (2) ओष्ठों पर व्रण। (3) मुखपाक। (4) जिह्वाशोथ। (5) नेत्र में कोर्निया का वाहिकावर्धन तथा बाद में कोर्निय की अपारदर्शिता। (6) केशों का झड़ जाना। (7) त्वचा का रूक्ष तथा शल्की हो जाना। (8) वृद्धि का रूक जाना आदि विकार हो जाते हैं।

दैनिक आवश्यकता– सामान्यतः 1.5 से 1.8 मिली ग्राम होती है परन्तु यदि भोजन में प्रोटिन का भाग अधिक है तो इस विटामिन की आवश्यकता अधिक होती है।

निकोटिनिक अम्ल अथवा पेलाग्रा निवारक कारक

यह विटामिन क्षारीय माध्यम में पूर्ण विलय कर जाता है एवं ऊष्मा में स्थिर रहता है।

प्राप्ति–अन्न के छिलकों में, हरी सब्जी तथा मटर, सेम, टमाटर आदि में तथा माँस, मछली, यकृत, दूध एवं खमीर में होता है। मक्का तथा मैदा में नहीं होता है। **कार्य–** (1) ऊतकों में यह विटामिन अधिकतर डाईन्यूक्लियोटाइड के रूप में रहता है तथा दोनों को–एन्जाइमों निकोटिनेमाइड एडिनिन डाई न्यूक्लियोटाइड तथा निकोटिनमाइड एडिनिन डाईन्यूक्लियोटाइड फॉस्फेट के संगठन में रहता है। ये को–एन्जाइम हाइड्रोजन वाहक एन्जाइम हैं, और शरीर में ऑक्सीकरण तथा अपचयन सम्बन्धी प्रतिक्रियाओं को करते हैं।

(2) शरीर वृद्धि के लिए यह विटामिन अति आवश्यक है।

(3) चयापचय तथा ऊतकों के ऑक्सीकरण में भाग लेता है।

(4) कार्बोहाइड्रेट के स्नेह में परिवर्तन में सहायक होता है।

(5) तन्त्रिका तन्त्र पर उत्तेजक प्रभाव डालता है।

(6) पेलाग्रा रोग को रोकता है। मक्का में यह विटामिन नहीं होता है। अतः जिन प्रदेशों मे केवल मक्का खाई जाती है, यह रोग हो जाता है। इसमें त्वचा लाल हो जाती है, उससे खुजली उठती है, शोफ हो जाता है फिर फफोले पड जाते हैं। जिह्वा का अग्र भाग तथा किनारे लाल हो जाते हैं, छाले पड़ जाते हैं। मुख में जलन होती है। अतिसार हो जाता है। मस्तिष्क, सुषुम्ना तन्त्रिका तथा परिसरीय तन्त्रिकाओं में परिवर्तन हो जाता है, जिससे मानसिक विकृति हो जाती है।

अभाव का प्रभाव :

(1) पेलाग्रा (2) भार में कमी (3) शारीरिक शक्ति में कमी तथा (4) अरक्तता।

कुतों में इस विटामिन की कमी से जीभ का वर्ण काला हो जाता है।

पेन्टोथेनिक अम्ल

यह जलशोषक, ऊषक में स्थिर तथा क्षारीय और अम्लीय माध्यम में नष्ट हो जाने वाला विटामिन है।

प्राप्ति–गेहूँ के चाकोर, मटर, शकरकन्द, शीरा खमीर, दूध, यकृत, वृक्क और अण्डों की जर्दी में यह मिलता है।

कार्य– यह विटामिन एसिटिल को–एन्जाइम ए के निर्माण में भाग लेता है। जो चयापचय में भाग लेने के अतिरिक्त अधिवृक्क प्रान्तस्था के हॉर्मोनों तथा कोलेस्टेरॉल के निर्माण में भी भाग लेता है।

दैनिक आवश्यकता– 10 मिली ग्राम पर्याप्त है तथा इतनी मात्रा आहार में साधारणतया होती है।

पिरीडॉक्सिन

यह ऊष्मा में तथा क्षारीय एवं अम्लीय माध्यम में स्थिर रहता है।

प्राप्ति– अन्न आदि के अंकुरों, पत्तीदार सब्जी, खमीर तथा यकृत, वृक्क, अण्डे की जर्दी, माँस आदि में यह विटामिन होता है।

कार्य– (1) एमीनों अम्लों के एमीन वर्ग को ऐसा एमीनों अम्ल से हटा कर दूसरी से संयोग कराकर नई एमीनों अम्लों के बनाने का कार्य करता है।

(2) पिरीडॉक्सल फॉस्फेट 'को–एन्जाइम' का कार्य करता है।

(3) केन्द्रीय तन्त्रिका तन्त्र के चयापचय में प्रमुख भाग लेता है, विशेष रूप से एड्रेनेलिन, सेरोटोनिन, डोपेनाइन आदि के चयापचय के लिए यह विटामिन अत्यन्त आवश्यक है।

अल्पता के लक्षण

(1) त्वक् रोग। (2) तन्त्रिकाओं का व्यपजनन। (3) जनन शक्ति की क्षीणता। (4) अरक्तता। (5) पेशियों में क्षीणता। (6) अपस्मार के समान लक्षण। (7) आक्षेप। (8) मूत्र में ऑक्जलेट का उत्सर्जन बढ़ जाता है तथा ऑक्जलेट अश्मरी की सम्भावना बढ़ जाती है।

पेलग्रा, बेरीबेरी, अनिद्र, उत्तेजना, उदर पीड़ा तथा चलने फिरने में कठिनाई आदि लक्षणों में यह विटामिन अच्छा प्रभाव डालता है।

दैनिक आवश्यकता– शिशु को 0.3 मिलीग्राम तथा वयस्क को 2 मिली ग्राम पर्याप्त है। यह मात्रा साधारणतया आहार द्रव्यों से प्राप्त हो जाती है।

फॉलिक अम्ल

यह पीले वर्ण का यौगिक है। जल में विलेय है तथा प्रकाश में नष्ट हो जाता है।

प्राप्ति– फूल गोभी, हरी सब्जी तथा यकृत एवं वृक्क में मिलता है।

कार्य– (1) डिऑक्सी रीबोन्यूक्लिक अम्ल के निर्माण में भाग लेता है।

() विटामिन बी12 के साथ न्यूक्लिक अम्ल के निर्माण में सहायक होता है।

() लोहित कोशिकाओं के निर्माण एवं परिपक्वता में भाग लेता है।

दैनिक आवश्यकता– 50 माइक्रोग्राम पर्याप्त होती है।

विटामिन बी12 (सायनोकोबेलामिन)

इस विटामिन के जल में घुलनशील लाल वर्ण के क्रिस्टल होते हैं।

प्राप्ति– यह दूध, माँस, अण्डे, यकृत, वृक्क आदि में मिलता है। आमाशय में केवल अन्तःस्थ कारक की उपस्थिति में इसका अवशोषण होता है। अतः इस विटामिन को बहिरस्थ कारक भी कहते है। अवशोषित होकर यह विटामिन यकृत में संग्रहित हो जाता है।

कार्य– (1) यकृत में अस्थितगत रक्तमज्जा में पहुंच लोहित कोशिकाओं की परिपक्वता का कार्य करता है।

(2) न्यूक्लिक अम्ल के निर्माण में भाग लेता है।

(3) अस्थिगत मज्जा में श्वेत कोशिकाओं तथा बिम्बाणुओं के निर्माण को प्रोत्साहित करता है।

(4) तन्त्रिका तन्त्र को स्वस्थ रखता है।

(5) कार्बोहाइड्रेट से लाइपिडों के निर्माण में सहायक होता है।

(6) अनेक एन्जाइमों को 'को–एन्जाइम' के रूप में प्रभावकारी बनाता है। इस प्रकार यह चयापचय में भाग लेता है।

अभाव का प्रभाव :

(1) प्रणाशी अरक्तता हो जाती है।

(2) अति ग्लूकोजरक्तता हो जाती है।

(3) शरीर की वृद्धि पर कुप्रभाव पड़ता है।

(4) जिह्वा तथा मुख का शोष हो जाता है।

(5) मेरू दण्ड के पश्च एवं पार्श्व स्तम्भों का व्यपजनन हो जाता है।

(6) महालोहित कोशिका प्रसूजनित अरक्तता हो जाती है।

दैनिक आवश्यकता– 10 म्यू ग्राम पर्याप्त होता है।

बायोटिन

यह जल तथा एल्कोहल में विलेय है। अम्लीय एवं क्षारीय माध्यमों में तथा ऊष्मा में स्थिर रहता है।

प्राप्ति–भोजन के प्रायः समस्त द्रव्यों में मिलता है। खमीर, फूलगोभी, मटर आदि वृक्क तथा अण्डे की जर्दी, यकृत में विशेष मिलता है। वृहदन्त्र में भी इसका निर्माण होता है।

कार्य– (1) यूरिया, पिरीमिडीन तथा वसा अम्लों के निर्माण में भाग लेता है। () अनेक एमीनों अम्लों के एमीनीहरण में सहायक होता है। () कार्बनडाइऑक्साइड के स्थानान्तरण में भाग लेने वाले एन्जाइमों की सहायता के लिए 'को–एन्जाइम' का कार्य करता है।

क्षय का प्रभाव– इस विटामिन की प्रायः रक्त मे अल्पता नहीं मिलती है।

दैनिक आवश्कता– 100–300 म्यू0 ग्राम पर्याप्त होती है।

विटेमिन बी कम्पलेक्स के लगभग सभी विटामिन चयापचय में को–एन्जाइमों का कार्य करते हैं।

एसकोर्बिक अम्ल

विटामिन सी जल में विलेय तथा स्नेह में अविलेय, ऊष्मा से नष्ट हो जाने वाला एवं अम्ल और क्षार लवणों के सम्पर्क में आकर नष्ट हो जाने वाला विटामिन है। वायु के अभाव में गर्म करने पर यह स्थिर रह जाता है।

प्राप्ति– ताजे फलों में विशेष रूप से सिट्रस फलों में यथा–आँवला, सन्तरा, नारंगी, नींबू, टमाटर, अन्ननास, पपीता, अमरूप, अंगूर, केला, मुनक्का आदि, ताजी सब्जी यथा फूल गोभी, बन्दगोभी, चुकन्दर, पालक, हरी मिर्च, सेम आदि तथा अंकुरित दालों, चना आदि में होता है। आलू, जम्बीरी नींबू, सेब, नाशपाती आदि में कम होता है। प्राणीजन्य पदार्थों में यथा–दूध,

माँस, मछली आदि में कम होता है। अतः दूध पर निर्भर रहने वाले शिशु का दूध के अतिरिक्त सन्तरे आदि फलों का रस अथवा विटामिन सी देना आवश्यक है। क्षुद्रान्त्र में अवशोषित होकर यह समस्त ऊतकों में फैल जाता है। यकृत, अधिवृक्क, पीयुषिका तथा पीत पिण्ड में इसका कुछ अंश संग्रहीत भी हो जाता है। 100 मिली लीटर रक्त सीरम में यह 0.8 मिली ग्राम होता है।

कार्य– (1) ऊतकों में हाइड्रोजन का वाहक है। अतः प्रत्येक कोशिका की ऑक्सीकरण, अपचयन आदि क्रियाओं को नियन्त्रित करता है।

(2) इन्सुलिन के उत्पादन में सहायक होता है।

(3) प्रसू कोशिकाओं यथा तन्तुप्रसू, अस्थि कोशिका प्रसू, रक्त कोशिकाप्रसू के सम्यक कार्य के लिए आवश्यक है।

(4) अन्तः कोशिका पदार्थों, जो केशिकाओं के अन्तः कला के निर्माण में सहायक हैं यथा–म्यूकोप्रोटीन, कोलैजन आदि को स्वाभाविक दशा में बनाए रखता है।

(5) अस्थियों में कैल्शियम तथा फॉस्फेट के संग्रह में सहायक होता है।

(6) व्रण रोपण में सहायक होता है।

(7) हीमोग्लोबिन के निर्माण हेतु लौह को उसके संग्रह स्थानों से रक्त मज्जा में पहुँचता है। इस प्रकार लोहित कोशिकाओं की परिपक्वता में सहायक होता है।

(8) फॉलिक अम्ल के फॉलिनिक अम्ल में परिवर्तन का सहायक है।

(9) अधिवृक्क प्रान्तस्था तथा जनन हॉर्मोन के निर्माण में सहायक होता है।

अल्पता का प्रभाव :

(1) स्कर्वी रोग हो जाता है। इस रोग में रक्त केशिकायें भंगुर हो जाती है। अतः ;पद्ध त्वचा के नीचे, पर्यस्थिकला, अंत्र, वृक्क आदि में रक्त स्त्राव होने लगता है। मसूड़ों की श्लेष्म कला का अपरदन हो जात है जिससे रक्त स्त्राव होने लगता है।

(2) अस्थियों तथा दाँतों की कुरचना हो जाती है।

(3) प्रसू कोशिकाओं में कार्यहीनता उत्पन्न हो जाती है।

(4) अस्थियाँ भंगुर हो जाती है जिससे अस्थि भंग का भय रहता है।

(5) अरक्तता हो जाती है। रक्त में लोहित कोशिकाओं तथा बिम्बाणुओं की संख्या कम हो जाती है।

(6) रक्त स्कन्दन देर से होता है।

(7) स्त्री तथा पुरूषों में जनन शक्ति का ह्यस हो जाता है।

(8) त्वचा पर विस्फोट हो जाते हैं।

दैनिक आवश्यकता– व्यस्क के लिए 100 मिलीग्राम, बच्चों के लिए 30–80 मिलीग्राम तथा गर्भवती अथवा दूध पान कराने वाली स्त्रियों के लिए 150 मिली ग्राम पर्याप्त होता है।

खनिज लवण

भोजन में उपस्थित लवण, जिनकी मुख्यतया शरीर में आवश्यकता होती है, निम्नलिखित हैं।

कैल्शियम, पोटेशियम, सोडियम, लौह, मैगनेशियम, ता, कोबाल्ट, मैगनीज, बशद, फॉस्फोरस, आयोडीन तथा गन्धक।

इन लवणों का आन्त्रभित्ति द्वारा अवशोषण हो जाता है तथा इनका शरीर में ऑक्सीकरण भी नहीं होता है। अतः इनसे ऊर्जा की उत्पत्ति नहीं होती है, परन्तु शरीर की क्रियाओं को नियमित रखने, ऊर्जा का उचित उपयोग होने तथा ऊतकों के निर्माण में ये प्रमुख भाग लेते है।

कैल्शियम

शरीर में कैल्शियम का उपयोग निम्न कार्यों में होता है :

(1) फॉस्फोरस के साथ अस्थि तथा दांतों के निर्माण के लिए। (2) तंत्रिका केन्द्रों तथा तंत्रिका तन्तुओं के आदेशों के नियमन के लिए। (3) हृदय संकोच क्रिया होते रहने के लिए। (4) रक्त–आतंच के लिए। (5) आमाशय में दूध की प्रोटीन को कैल्शियम के सीनोजन में परिवर्तन के लिए तथा (6) अनेक एन्जाइमों की क्रियाशीलता के लिए।

कैल्शियम लवण दूध में 0.12:, पनीर में 0.8:, अनाज तथा हरी सब्जियों में 0.01 से 0. 03: होते हैं। आहार में उपस्थित समस्त कैल्शियम लवणों का आन्त्र में अवशोषण नहीं होता है। लगभग 70: अंश पुरीष के द्वारा शरीर से निकल जाता है। कैल्शियम अवशोषण के लिए विटामिन डी की आवश्यकता होती है। विटामिन डी का अन्त्र में अभाव होने पर कैल्शियम का

अवशोषण का अवशोषण बहुत अल्प मात्रा में होता है। अन्त्र के अनेक रोगों यथा संग्रहणी में भी कैल्शियम का अवशोषण कम हो जाता है।आहार द्रव्यों में फॉस्फेट अथवा ऑक्जलेट अधिक होने पर ये कैल्शियम के साथ अविलेय लवण बनाते हैं। अतः कैल्शियमों का अवशोषण नहीं होता है।100 मिली लीटर रक्त में 9 से 11 मिली ग्राम कैल्शियम सामान्यतः होता है। यह मात्रा परावटु द्वारा नियन्त्रित रहती है।

यदि प्लाज्मा में कैल्शियम की मात्रा अत्यधिक हो जाती है तो हृदय के प्रकुंचन अवस्था में रूक जाने का भय रहता है।

कैल्शियम की दैनिक आवश्यकता 0.9 से 1.0 ग्राम होती है।

फॉस्फोरस

फॉस्फोरस क्षुद्रान्त में अर्काबनिक फॉस्फेटों के रूप में अवशोषित होता है। अन्त्र का अम्लीय माध्यम तथा कैल्शियम की उपस्थिति अवशोषण में सहायक होती है।

फॉस्फोरस प्रत्येक कोशिका में होता है। अतः शरीर में इसकी अल्पता की बहुत कम सम्भावना रहती है। यह फॉस्फोप्रोटिन के रूप में, दूध की केसिनोजन में फॉस्फोटाइड के रूप में एवं अण्डे यकृत तथा अग्न्याशय में भी होता है। सौ मिली लीटर रक्त में 8 से 18 मिली–ग्राम फॉस्फो–लाइपिड के रूप में रहता है।

कार्य– (1) शरीर की प्रत्येक कोशिका में उपस्थित न्यूक्लिक अम्ल तथा न्यूक्लियोटाइड के संगठन में फॉस्फोरस होता है। (2) ऐडीनोसिन ट्राइफॉस्फेट तथा क्रियेटिन फॉस्फेट के रूप में यह ऊर्जा का संग्रहकर्त्ता है। (3) अकार्बनिक फॉस्फेट कैल्शियम से संयुक्त होकर अस्थि–निर्माण में मुख्य रूप से भाग लेता है। शरीर में उपस्थित फॉस्फोरस का लगभग 80 प्रतिशत अंश अस्थि एवं दांतों के निर्माण में व्यय होता है। भोजन में जितना फॉस्फेट लेते हैं उसका 1/3 भाग मूत्र द्वारा उत्सर्जित हो जाता है। 100 मिलीलीटर रक्त में बच्चों में 5–6 मिलीग्राम तथा बढ़ों में 2.5 से 4.5 मिलीग्राम फॉस्फेट रहता है। बच्चों के रक्त में इसलिए अधिक होता है कि उनको अस्थि आदि की वृद्धि के लिए अधिक फॉस्फोरस की आवश्यकता होती है। यदि 100 मिलीलीटर रक्त में इसकी मात्रा 2 मिलीग्राम से कम होती है तो यह मूत्र में नहीं आता है।

आयोडिन

आयोडिन का आन्त्र भित्ति द्वारा अवशोषण हो जाता है तथा अवशोषित होकर प्लाज्मा में पहुँच जाता है। इसका 1/2 भाग अवटु ग्रन्थि इस्तेमाल कर लेता है। शेष भाग मूत्र द्वारा उत्सर्जित हो जाता है। यह अवटु के हॉर्मोन थाइरोक्सिन के निर्माण में भाग लेता है। इसकी शरीर में अल्पता अवटु शोथ उत्पन्न कर गलगण्ड उत्पन्न करती है। कमी वाले क्षेत्रों में पोटैशियम आयोडाइड क अल्प मात्रा खाने के नमक में मिलाकर व्यवहार में लाते हैं। विश्व स्वास्थय संगठन ने आयोडीन की अल्पता को दूर करने तथा अल्पता के कारण होने वाले गलगण्ड की चिकित्सा के लिए आयोडीनयुक्त पॉपी के बीज के तैल की एक मिली लीटर मात्रा को पेशीय इन्जेक्शन द्वारा देने का सुझाव दिया है। इसके द्वारा शरीर रक्त में सामान्य से 30 गुणा अधिक आयोडिन एकत्रित हो जाती है जो दस वर्ष के लिए पर्याप्त होती है। आयोडिन की दैनिक आवश्यकता लगभग 0.5 मिली ग्राम होती है।

लौह

दूध के अतिरिक्त लगभग सभी भोजन पदार्थों में इसकी मात्रा पर्याप्त होती है। बिना छने गेहूँ के आटे में 10 मिलीग्राम, मटर में 10 मिलीग्राम, पनीर में 1.3 मिलीग्राम, आलू में 1.0 मिलीग्राम, पालक में 2.5 मिलीग्राम, अण्डे में 3 मिलीग्राम, मांस में 0.7 मिलीग्राम, कोका में 13 मिलीग्राम लौह इन पदार्थों की सौ ग्राम मात्रा में होता है।

100 मि0ली0 रक्त में 15 ग्राम हीमोग्लोबिन होता है। इस हीमोग्लोबिन में लौह की मात्रा 50 मिलीग्राम होती है।लौह का जल–विलेय भाग अकार्बनिक लवणों के रूप में शीघ्रता से अवशोषित हो जाता है। अविलेय लौह लवणों, यथा फेरस फॉस्फेट, का अवशोषण नहीं होता है। यदि लौह लवणों की सूक्ष्म मात्रा मुख द्वारा ली जाती है तो अवशोषण का प्रतिशत मान अधिक होता है। अवशोषण की मात्रा शरीर की आवश्यकता पर निर्भर करती है। अरक्तता वाले व्यक्ति में अवशोषण अधिक होता है। प्रतिदिन 50 मिली मीटर लोहित कोशिकायें नष्ट होती रहती हैं, जिसमें 2.5 मिली ग्राम लौह होता है। परन्तु मूत्र, पुरीष स्वेद द्वारा लगभग 5 मिली ग्राम लौह ही शरीर से निकलता है शेष 20 मिली ग्राम लौह शरीर में ही रह जाता है और हीमोग्लोबिन के निर्माण में पुनः भाग लेता है। इस प्रकार मनुष्य की प्रतिदिन की आवश्यकता केवल 5 मिली ग्राम रहती है। स्त्रियों में ऋतुस्त्राव के समय शरीर से लगभग 150–200 मिली लीटर रक्त निकल जाता है। अतः उनकी दैनिक आवश्यकता 10 मिलीग्राम हो जाती है।

स्त्रियों में गर्भावस्था में तथा शिशु के स्तन्यपान के समय लौह की आवश्यकता अधिक हो जाती है।

सोडियम

सोडियम क्लोराइड ही ऐसा खनिज लवण है जिसे भोजन में ऊपर से लिया जाता है। शरीर की दैनिक आवश्यकता से कहीं अधिक लवण हम भोजन में लेते हैं। शरीर में इसकी दैनिक आवश्यकता लगभग 1 से 2 ग्राम होती है। यदि स्वेदन अधिक हो जाता है अथवा अतिसार हो जाता है तो अधिक मात्रा में लेने की आवश्यकता पड़ती है। शरीर में आवश्यकता से अधिक सोडियम लवण होने पर वह मूत्र द्वारा उत्सर्जित हो जाता है। फलों आदि में साइट्रेट अथवा टारट्रेट के यौगिकों के रूप में सोडियम रहता है। कोशिकाओं से बाहर मिलने वाले शारीर तरलों में भी यह होता है।

सोडियम शरीर में दो रूपों में रहता है।

सोडियम आयन के रूपों में तथा सोडियम यौगिकों के रूप में।

(1) सोडियम आयन के कार्य :

(1) हृद्स्पन्द प्रारम्भ करता है तथा उसे बनाए रखता है। (2) ऐच्छिक तथा अनैच्छिक पेशी संकोच के लिए आवश्यक है। (3) तन्त्रिका आवेग के लिए आवश्यक है।

(2) सोडियम यौगिकों के कार्य :

(1) सोडियम लवण बाइकार्बोनेट, फॉस्फेट, क्लोराइड, प्रोटिनेट आदि यौगिको के रूप में शरीर में रहते हैं। (2) इस रूप में ये रक्त की प्रतिक्रया को बनाए रखते हैं। (3) पित्त तथा अग्न्याशय रस की प्रतिक्रियाओं को बनाये रखते है। (4) मूत्र की प्रतिक्रिया को बनाए रखते है। (5) परासरणी दाब को बनाए रखते हैं। (6) जठर रस में हाइड्रोक्लोरिक अम्ल के निर्माण में भाग लेते हैं।

जब प्लाज्मा में सोडियम का सान्द्रण सामान्य से अधिक हो जाता है तो प्रतिमूत्रल हॉर्मोन की उत्पत्ति बढ़ जाती है जिससे दूरस्थ संचलित नलिकाओं में जल का अवशोषण बढ़ जाता है इससे प्लाज्मा में सोडियम का सान्द्रण सामान्य से कम हो जाता है। इसके विपरीत यदि प्लाज्मा में सोडियम का सान्द्रण सामान्य से कम हो जाता है तो अधिवृक्क ग्रन्थि के एलडॉस्टेरॉन तथा हाइड्रोकॉर्टीसोन हॉर्मोनों की उत्पत्ति बढ़ जाती है जिनकी क्रिया स्वरूप

वृक्क की संचलित नलिकाओं में सोडियम का अवशोषण बढ़ जाता है। परिणामस्वरूप रक्त में सोडियम का सान्द्रण हो जाता है।

पोटेशियम

पोटेशियम शरीर की प्रत्येक कोशिका के संगठन में होता है। अतः शरीर में इसकी अल्पता की सम्भावना कम रहती है। यह लगभग प्रत्येक आहार द्रव्य में होता है। इसकी दैनिक आवश्यकता लगभग 4 मिलीग्राम होती है। 100 मिली लीटर रक्त में पोटेशियम की मात्रा 200 मिलीग्राम होती है। इसका अधिकांश भाग लोहित कोशिकाओं तथा शरीर की अन्य कोशिकाओं में रहता है। प्लाज्मा में केवल 15–20 मिली ग्राम ही रहता है। यदि प्लाज्मा में पोटेशियम आयनों की संख्या अधिक हो जाती है तो हृद्स्पन्द अनुशिथिलन अवस्था में रूक जाता है। शरीर में इसके मुख्य कार्य आगे दिये जा रहे हैं।

कार्य– (1) कोशिका में अन्दर परासरसणी दाब बनाए रखता है। (2) कोशिका की प्रतिक्रिया को बनाए रखता है। (3) कार्बन डाइआक्साइड के वहन में सहायक होता है। (4) तन्त्रिका तन्त्र के कार्यों में सहायक होता है परन्तु (5) पेशी संकुचन में रूकावट डालता है।

ताम्त्र

हीमोग्लोबिन के निर्माण में लौह का उपयोग ताम्त्र की सहायता से होता है। यकृत इसका मुख्य संग्रह स्थान है। यह अनाज, किशमिश, मुनक्का, चुकन्दर, अखरोट, बादाम तथा दालों में होता है। यकृत में बहुत अधिक होता है। दैनिक आवश्यकता केवल लगभग 2 मिलीग्राम है, जो मिश्रित आहार से प्राप्त हो जाती है।

मैनगनीज

ताम्त्र के समान मैनगनीज भी हीमोग्लोबिन के निर्माण में सहायक होता है। मैनगनीज आयन अनेक एन्जाइमों, यथा अरगीनेस, फॉस्फोरेस, कार्बोक्सीलेस आदि को क्रियाशीलता प्रदान करने में सहायक होते हैं। इसकी दैनिक आवश्यकता अत्यन्त अल्प (2 मिली ग्राम) होती है। साधारण मिले जुले भोजन के पदार्थों में इस मात्रा की पूर्ति हो जाती है।

कोबाल्ट

यह विटामिन का घटक है। अतः रक्त निर्माण में सहायक होता है। इसकी दैनिक आवश्यकता बहुत अल्प मात्रा में होती है।

यशद

यशद शरीर की समस्त कोशिकाओं में रहता है। कार्बोनिक एनहाइड्रेस एन्जाइम, जो कार्बनडाइऑक्साइड के वहन में सहायक होता है के निर्माण में यशद होता है। इन्सुलिन–यशद लवण के रूप में क्रिस्टल बनता है। अतः अग्न्याशय में यशद बहुत होता है। भोजन द्रव्यों में यशद आवश्यकता मात्रा में, सामान्यतः रहता है। इसकी दैनिक आवश्यकता 1.2 मिलीग्राम है।

मैगनेशियम

कैल्शियम के अवशोषण के समान मैगनेशियम का भी अन्त्र में अवशोषण बहुत कम मात्रा में होता है। हरी सब्जियों, अनाज तथा माँस में यह पर्याप्त मात्रा में रहता है। रक्त में इसकी उपस्थिति कैल्शियम के विपरीत होती है। कैल्शियम प्लाज्मा में अधिक रहता है। मैगनेशियम लोहित कोशिकाओं में रहता है। 100 मिली लीटर रक्त के प्लाज्मा में 2.5 मिली ग्राम तथा लोहित कोशिकाओं में 3.5 मिलीग्राम मैगनेशियम होता है। शरीर का 70 प्रतिशत मैगनेशियम अस्थियों में मैगनेशियम फॉस्फेट रूप में होता है। ऐच्दिक पेशियों में यह केवल 0. 02 होता है।

शरीर में इसकी अल्पता से रक्त परिसंचरण ठीक प्रकार से नहीं होता है। मानसिक उत्तेजना अधिक हो जाती है। आक्षेप और अन्त में मृत्यु हो जाती है। मैगनेशियम की शरीर में न्यूवता के समय यदि कैल्शियम की अधिक मात्रा ली जाती है तो परिणाम गम्भीर हो जाते हैं।

मैगनेशियम के अन्य कार्य हैं– 1) यह अस्थि तथा दांतों के निर्माण में भाग लेता है। 2) अनेक एन्जाइमों को क्रियाशीलता प्रदान करता है। 3) पेशी संकुचन में भाग लेता है। 4) कैल्शियम आयनों के विपरीत कार्य करता है, जिससे शरीर में इन दोनों के कार्यों में सन्तुलन बना रहाता है।

इकाई - 3

मधुमेह (Diabetes Mellitus)

1. प्रस्तावना
2. मधुमेह के कारण (Etiology)
3. मधुमेह के प्रकार (types)
4. रोग के लक्षण (Symptoms)

मधुमेह (Diabetes Mellitus)

- प्रस्तावना
- मधुमेह के कारण (Etiology)
- मधुमेह के प्रकार (types)

- मधुमेह में चयापचय (Metobelism)
- मधुमेह में पोषक तत्वों की आवश्यकता
- मधुमेह के रोगी को देने योग्य भोज्य पदार्थ
- मधुमेह के रोगी के लिये वर्जित भोज्य पदार्थ
- आहार तालिका (Diet Plan)

1. प्रस्तावना – जब किसी व्यक्ति के रक्त में ग्लूकोज की मात्रा सामान्य से अधिक हो जाती है तो उस व्यक्ति को मधुमेह (शुगर) रोग से ग्रसित कहा जाता है। सामान्यतः व्यक्ति के शरीर में ग्लूकोज की मात्रा 80–100 मिली ग्राम प्रति 100 मिली लीटर (रक्त मे) होती है।

जब रक्त में ग्लूकोज की मात्रा 180 मिली ग्राम/100 मि.ली. से अधिक हो जाती है तो ग्लूकोज गुर्दे की कोशिकाओं से छनकर पेशाब में आने लगता है और शरीर से बाहर विसर्जित होने लगता है, जब

ग्लूकोज की बहुत अधिक मात्रा पेशाब में आने लगती है तो पेशाब गाढ़ा होकर शहद की तरह हो जाता है। इसीलिये इस बीमारी को मधुमेह (Rain of Honey) कहते हैं।

2. मधुमेह के कारण (Causes of Diabetes) –

1. आयु तथा लिंग – आयु बढ़ने के साथ साथ मधुमेह के होने की भी संभावना बढ़ती जाती है। यह नवजात शिशु से लेकर किसी भी उम्र के व्यक्ति में हो सकती है। स्त्री तथा पुरूष दोनों में इसकी संभावना समान होती है।
2. वंशानुक्रम (Heredity) – मधुमेह रोग वंशानुक्रम का रोग है। यदि मधुमेह 40 वर्ष की अवस्था के पहले हो जाता है तो तात्पर्य है कि वंशागत कारक इसकी उत्पत्ति का कारण है।
3. मोटापा (Obesity) – मोटे व्यक्तियों में यह रोग अधिक होता है। जो व्यक्ति मीठे खाद्य पदार्थ, आलू, चावल, का ज्यादा सेवन करते है, उन व्यक्तियों के रक्त में ग्लूकोज की मात्रा अधिक बढ़ जाती है जिससे पित्ताशय को अधिक इन्सूलिन का स्त्राव करना पड़ता है। काफी समय तक पित्ताशय के अधिक क्रियाशील होने से आइसलेट ऑफ लैंगरहेन्स के कोष थक जाते हैं तथा में नष्ट होने लगते हैं जिससे इन्सुलिन कम बनने लगता है और मधुमेह का रोग हो जाता है।
4. मानसिक तनाव या चिन्ता (Mental Tension & worries) – मधुमेह की उत्पत्ति में यह सहायक होते हैं।
5. गर्भावस्था (Pregnency) – वह स्त्रियाँ जिनमें मधुमेह की सम्भावना अधिक होती है उनमें गर्भावस्था के समय मधुमेह रोग हो जाता है क्योकि गर्भावस्था कार्बोहाईट के चयापचय पर प्रभाव डालती है।

3. मधुमेह के प्रकार (Types of Diabetes)

1. छोटी उम्र में पाया जाने वाला मधुमेह (Juvenile Onset type Diabetes) – यह 40 वर्ष से कम की अवस्था में होती है। इनको इन्सुलिन की आवश्यकता होती है। अतः इन्हें Insulin dependent कहते है।

2. प्रौढ़ अवस्था में पाया जाने वाला मधुमेह (Maturity onset Type Diabetes) इस अवस्था में मरीज आहार नियन्त्रण से ठीक रहते है, परन्तु कभी कभी इनको इन्सुलिन की आवश्यकता करना पड़ सकती है। अतः इन्हें Insulin Independent कहते है।

4. रोग के लक्षण (Symptoms)

1. बहुमूत्रता (Poly Uria) – मूत्र बार बार तथा अधिक मात्रा में निष्कासित होता है इसमें ग्लूकोज की काफी मात्रा निष्कासित हो जाती है।
2. अधिक प्यास लगना (Poly dipsia) – मूत्र के रूप में शरीर के जल की काफी मात्रा बाहर निकल जाने से रोगी को अधिक प्यास लगती है।
3. भूख बढ़ जाती है (Poly Phagia) – पौष्टिक तत्वों का पूर्ण उपयोग न होने के कारण काशिकाओं की मांग पूरी नहीं हो पाती और भूख अधिक लगती है।
4. पानी की कमी (Dehydration) – मूत्र द्वारा पानी की ज्यादा मात्रा निकल जाने के कारण कोशिकाओं में पानी की कमी हो जाती है।
5. प्रतिरोधक क्षमता में कमी – शरीर की रोगरोधक क्षमता कम हो जाती है, जिस कारण संक्रामक या अन्य रोगो से बचाव की शक्ति कम हो जाती है
6. घाव के भरने में काफी समय लगता है।
7. आँखों से दिखाई देना बंद हो जाता है, जिसका कारण मोतियाबिन्द का बनना।
8. कोमा

5. मधुमेह में चयापचय (Metabolism) – शारीरिक एंव मानसिक कार्य करने के लिए व्यक्ति को ऊर्जा की आवश्यकता होती है। यह ऊर्जा ग्लूकोज से प्राप्त होती है। शरीर में ग्लूकोज की प्रप्ति के तीन स्त्रोत हैं–

1. कार्बोहाइड्रेट – इसमें 100 प्रतिशत ग्लूकोज प्राप्त होता है।
2. प्रोटीन – प्रोटीन से अमीनों एसिड तथा अमीनो एसिड का 58 प्रतिशत भाग ग्लूकोज में बदल जाता है।
3. वसा – वसा से फैटी एसिड तथा फैडी एसिड का 10 प्रतिशत भाग ग्लूकोज में बदल जाता है।

6. मधुमेह में पोषक तत्वों की आवश्यकता –

1. कैलोरी – मधुमेह में अलग अलग वजन के रोगी को तथा अलग अलग क्रियाशीलता वाले व्यक्ति को दी जाने वाली कैलोरी की मात्रा भी भिन्न भिन्न होती है। व्यक्ति यह कैलोरी या ऊर्जा कार्बोहाइड्रेट, वसा व प्रोटीन से प्राप्त करता है।
2. कार्बोहाइड्रेट – सामान्यता मधुमेह के रोगी के आहार में कार्बोहाइड्रेट की अधिक कमी नही की जाती है लेकिन उन रोगियो के आहार में कार्बोहाइड्रेट की मात्रा घटायी जाती है जिनको इन्सुलिन देने की आवश्यकता नही होती है।
3. प्रोटीन – रोगी को सामान्य एक स्वस्थ व्यक्ति की तरह प्रोटीन की आवश्यकता होती है।
4. वसा – इसमें रोगी के आहार में वसा की कम मात्रा देनी चाहिये।
5. विटामिन – अन्य विटामिनों की सामान्य मात्रा के साथ विटामिन बी समूह की मात्रा बढा देनी चाहिए।
6. खनिज लवण – इसकी सामान्य मात्रा देनी चाहिए, परन्तु उच्च रक्तचाप के रोगियों को सोडियम लवण की मात्रा कम लेनी चाहिए।

7. मधुमेह के रोगी को देने योग्य भोज्य पदार्थ (Foods Allowed) – गेहूँ, जौ, आटा, चनादाल, सभी प्रकार की सब्जी व पत्तेदार सब्जी, जामुन, सन्तरा, अनार, बेर वसारहित – दूध, दही, मठठा, छैना, सैकरीन, सभी प्रकार का मांस, मुर्गी, मछली, अण्डा आदि।

8. मधुमेह के रोगी के लिए वर्जित भोज्य पदार्थ (Foods Avoid) – चीनी, गुड़, गन्ने का रस, शहद, सभी प्रकार की मिठाईयाँ और शर्करा युक्त पेय पदार्थ, आलू, अरबी, जिमीकन्द, शकरकन्द, चुकन्दर चावल, किशमिश, छुआरा, खुवानी, अंजीर, पेस्ट्री, केक, चॉकलेट, आईस्क्रीम आदि।

9. सामान्य भार वाले पीड़ित रोगी के लिए आहार तालिका (Diet Plan for Normal weight Diabetic Patient)

	मांसाहारी	शाकाहारी
सुबह	चाय 1 कप	चाय 1 कप

	चीनी – 1/2 चम्मच	चीनी – 1/2 चम्मच
नाश्ता	अण्डा 2 उबला	दूध 1 कप
	टोस्ट 1	टोस्ट 1
	मक्खन 2 चाय का चम्मच	मक्खन 2 चाय का चम्मच
	पपीता 100 ग्राम	पपीता 100 ग्राम
दोपहर का खाना	मांस का सूप 1 कप	सब्जियों का सूप 1 कप
	भूना मांस 50 ग्राम	दाल 1 कप
	उबली बीन्स 1/2 कप	फूल गोभी पकी हुई 1 कप
	पकी हुई पत्ता गोभी 1/2 क	टमाटर एंव खीरे की सलाद 1
	सब्जियों का सलाद 1 छोटी प	चपाती 2, दही 1 कप अमरूद
	ब्रेड 1 स्लाइस, अमरूद 1	
शाम की चाय	चाय 1 कप	मलाई निकला दूध 1 कप
	छूध 2 बड़ा चम्मच	चीनी 1/2 चम्मच
	चीनी 1/2 चम्मच	
	सेब	
रात का खाना	चिकेन सूप 1 कप	टमाटर सूप 1 कप
	मछली 100 ग्राम	ब्रेड आलू 1
	उबली हरी मटर 1 कप	पकी हुई पत्ती गोभी 1 कप

	ब्रेड 1 स्लाइस	दाल 1 कप
	मलाई निकला दूध 1 कप	चपाती 2
		मटठा 1 कप

जठरांत्रीय रोग (पाचन सम्बन्धी रोग) GIT Disorders

जो आहार हम रोज करते है, अगर उसमें किसी प्रकार का संक्रमण हो, तेज मिर्च मसालेदार हो या अधपका हो, तो हमें विभिन्न प्रकार के पाचन सम्बन्धी रोग हो जाते है। जैसे–

1. आमाशय शोथ (Gastritis)
2. कब्ज (Constipation)
3. अतिसार (Diarrhoea)
4. अल्सरेटिव कोलाइटिस (Ulcerative Colitis)
5. पैप्टिक अल्सर (Peptic Ulcer)

1. आमाशय शोथ **(Gastritis)** – इसको भी दो भागों में विभक्त किया जा सकता है –
    1. तीव्र (Acute) – इसका मुख्य कारण आमाशय में जलन तथा खराश का उत्पन्न होना है। आहार में अधिक मात्रा में मिर्च मसाले वाले भोजन से, अधिक शराब पीने से, बीमारी में कीटाणुनाशक दवाईयों का सेवन करने से आमाशय में खराश उत्पन्न हो जाती है।

       लक्षण – इस अवस्था में जी मिचलाना, पेट में दर्द तथा कै होने लगती है।

आहार व्यवस्था – शुरू के 24 से 48 घंटे तक रोगी को निराहार रखना चाहिये, पानी उबालकर तथा ठण्डा करके देना आवश्यक है, थोड़े – थोड़े समय पर बर्फ भी चूसते रहना चाहिये। पेट दर्द तथा कै बंद होने पर रूचि अनुसार तरल भोज्य पदार्थ प्रारम्भ कर सकते हैं।

देने योग्य भोज्य पदार्थ – दूध, दही का मटठा, डाब, ग्लूकोज पानी, नींबू की शिकंजी ग्लूकोज के साथ, विटामिन बी कॉम्पलैक्स आदि।

वर्जित भोज्य पदार्थ – चाय, कॉफी , तम्बाकू आदि।

2. दीर्घ शोथ (Chronic Gastritis) – यह दशा भी अव्यवस्थित भोजन, चटपटे भोजन, अधिक भोजन ग्रहण करने से होती है। अधिक शराब, तम्बाकू या दवाइयों के कारण भी ऐसी दशा उत्पन्न हो जाती है। यह दशा पैप्टिक अल्सर तथा कैंसर के कारण भी हो सकती है।

   आहार व्यवस्था – इसमें कोमल व सादा भोजन देना चाहिये।

   वर्जित भोज्य पदार्थ – मिर्च, मसाले, अचार, चटनी, खस्ता खाद्य पदार्थ, अत्यधिक तले हुये भोजन का उपयोग नही करना चाहिये।

2. कब्ज (Constipation) – अच्छे, स्वास्थ्य एंव आराम के लिए प्रतिदिन मल का निष्कासन अति आवश्यक है। कब्ज में शरीर से निरूपयोगी पदार्थो का बहिष्करण ठीक प्रकार से नहीं होता।

कब्ज के लक्षण –

1. कई बार व्यक्ति लापरवाही के कारण प्रतिदिन शौच नही जाते हैं, यह Dyschzia कहलाता है। इस आदत में भोजन किसी भी तरह सहायक नही होता है।

2. बड़ी आँत की दीवार के स्नायु संकुचित होकर संकीर्ण हो जाते हैं और वे बड़ी आँत की नालिका को एक कड़े रबड़ के टयूब के सामान फुला देते हैं। इस कारण व्यर्थ पदार्थ मल द्वार तक नहीं पहुँच पाते।

देने योग्य भोज्य पदार्थ – इस अवस्था में विटामिन सी, छने हुए फलों का रस, टमाटर के रस या छनी हुई सब्जी के रस, उबला चावल, जैली, घुटी हुई दाल, पानी, आधे उबले आलू, दूध, मक्खन, घी, मटठा, बीयर, आदि भोज्य पदार्थ रोगी को देने चाहिये।

वर्जित भोज्य पदार्थ – छिलके और रेशेदार पदार्थ, सूखे फल, सम्पूर्ण धान्य, मुनक्का अंजीर आदि पदार्थ इस अवस्था में नही देने चाहिये।

3. इस अवस्था में बड़ी आँत के स्नायुओं की गतिशीलता या कार्य करने की क्षमता मन्द हो जाती है। इसमें पानी का अधिक प्रयोग किया जाये, रेशे युक्त पदार्थ दिये जायें।

कब्ज के पीड़ित व्यक्ति के लिए आहार (Diet Plan for constipation patient)

प्रातः काल	1 गिलास गुनगुना पानी
सुबह का नाश्ता	अंकुरित चने, अंजीर, फल (पपीता, अमरूद) दूध 1 गिलास
दोपहर का खाना	भूसी सहित (Bran) रोटी –3, हरी सब्जी 150 ग्राम, मूंग की दाल 30 ग्राम , सलाद, दही 70 ग्राम
शाम की चाय	चाय 1 कप, बिस्कुट 2, सेब 1
रात का खाना	चोकर युक्त रोटी 3, हरी पत्ते वाली सब्जी 150 ग्राम, अन्य सब्जी 100 ग्राम, सलाद 1 क्वार्टर प्लेट,
सोते समय	गर्म दूध 1 गिलास , मुनक्का 5

पौष्टिक तत्वों की आवष्यकता –

प्रोटीन – सामान्य से थोड़ी अधिक प्रोटीन की आवश्यकता होती है। करीब 60 से 80 ग्राम / प्रतिदिन।

वसा – वसा के प्रयोग से मल साफ होता है। अतः मक्खन, घी, उचित मात्रा में देनी चाहिए।

कार्बोहाइड्रेट – सामान्य मात्रा में ही इसकी आवश्यकता होती है। लेकिन रेशेदार पदार्थो को ज्यादा दिया जाता है।

विटामिन – आँतो की माँसपेशियों की क्रियाशीलता को बढ़ाने के लिए विटामिन 'बी' समूह की अधिक आवश्यकता पड़ती है। खमीर वाले पदार्थ उचित मात्रा मे देने चाहिये।

जल – कब्ज के रोगी को पानी खूब देना चाहिये। सुबह गुनगुने पानी में नींबू डालकर देने से कब्ज के रोगी को आराम मिलता है।

कैलौरी – सामान्य कैलोरी की ही आवश्यकता पड़ती है।

कब्ज में देने योग्य भोज्य पदार्थ – चोकर युक्त आटा, गेहूँ का दलिया, साबुत दाले, अंकुरित मूंग/ चना, सभी प्रकार की हरी सब्जियाँ, पत्ते वाली सब्जियाँ, सेब, अमरूद, केला, सन्तरा, अंगूर, अंजीर मुनक्का आदि।

कब्ज में वर्जित भोज्य पदार्थ – छना हुआ आटा, मैदा, मैदा से बनी चीजें, चावल, तले हुए भोज्य पदार्थ, गरिष्ठ मिर्च – मसाले युक्त व्यंजन, गरिष्ठ मिठाइयाँ, मुरब्बा आदि।

3. अतिसार (Diarrhoea) – अतिसार में मल त्याग बार बार होता है, मल पतला एंव टूटा – फूटा होता है। अतिसार दुसाध्य(Acute) या दीर्घकालीन (Chromic) हो सकता है। यह किसी प्रकार का रोग नही है। परन्तु रोग का लक्षण है।

रोग के कारण – अतिसार दूषित भोजन तथा पानी से होता है। इसका प्रकोप गर्मी तथा बरसार में अधिक रहता है। इस रोग के जीवाणु मक्खी, मच्छर, मनुष्य तथा जानवर होते हैं।

कभी कभी कब्ज से पीड़ित लोग नाना प्रकार की कब्ज दूर करने की दवाइयों का उपयोग करते हैं जिससे अतिसार हो जाता है।

पौष्टिक तत्वों की आवष्यकता –

कैलोरी – इस अवस्था में कैलोरी सामान्य से 10 से 20 प्रतिशत बढ़ाकर देनी चाहिये।

प्रोटीन – इस अवस्था में प्रोटीन भी सामान्य से 50 प्रतीशत बढ़ाकर देनी चाहिये क्योंकि अतिसार के कारण रोगी के शरीर की कोशिकाओं में ज्यादा टूट फूट होती है।

कार्बोहाइड्रेट – इस अवस्था में मरीज को रोज कार्बोहाइड्रेट 1–2 ग्राम देनी चाहिए।

विटामिन – बी कम्पलैक्स की मात्रा ज्यादा देनी चाहिए।

अतिसार में देने योग्य भोज्य पदार्थ – धुली दालें, पकी चावल, दाल, माँस मछली, चिकेन महीन दलियां, उबला अण्डा, सूप, पकी सब्जी, आलू, शकरकन्दी, जैम व मुरब्बा, पेय पदार्थ, पानी, केला, दही, पनीर, साबूदाना आदि।

वर्जित भोज्य पदार्थ – साबूत अनाज, दालें, पत्ते दार सब्जियां, सूखे फल, मेवे, पापड़ चटनी, अचार, मिठाई, सब्जियों का सलाद, बीन्स आदि।

आहार तालिका (Dict for Diarrhea patient)

प्रातः काल	चाय 1 कप
सुबह का नाश्ता	नमकीन मट्ठा, केला
मिड मील	सब्जियों / फलों का सूप
दोपहर का खाना	धुली मूंग की खिचड़ी/दलिया, दही
शाम की चाय	साबूदाने की खीर, फल
रात का खाना	हरी सब्जी, धुली दाल, चावल, सूप
सोते समय	शिकंजी / फटे दूध का पानी

4 अल्सरेटिव कोलाइटिस (ulcerative Colitis) – इस रोग में बड़ी आँत में सूजन आ जाती है। उसमें छाले पड़ जाते है। यह अवस्था अधिकतर युवा प्रौढों में देखी गयी है, जो कि भावुक, अधीर और चिड़चिड़े मिजाज के होते है। अधिक परेशानी की अवस्था में रोग बढ़ जाता है। कभी कभी कुछ व्यक्तियों को दूध, अण्डा, गेहूँ, काफी आदि खाद्य पदार्थ माफिक नहीं आते, अतः ऐसी दशा उत्पन्न हो जाती है। तीक्षण कोलाईटिस (Severe Colitis) में दस्तों के साथ अधिक मात्रा में जल, प्रोटीन तथा इलेक्ट्रोलाइट्स की भी हानि होती रहती है।

रोग के लक्षण – पेट में दर्द, अपचन भूख का मर जाना ऑव तथा रक्त युक्त दस्त कभी ज्वर आना आदि। रोगी का वजन गिरता जाता है। शरीर से पानी अधिक निकल जाने से शुष्कीकरण (Dehydration) की स्थिति आ जाती है। पोषण स्तर गिर जाता है।

आहार व्यवस्था (Diet Management) – प्रारम्भ में प्रोटीन युक्त तरल आहार अधिक मात्रा में लेना चाहिए। प्रोटीन के मुख्य स्त्रोत प्राणीज्य (Animal Protein) होने चाहिए। मट्ठा या फलों का रस भी यथोचित मात्रा में दिया जा सकता है। मिर्च, मसाले, तली हुई वस्तुओं का

उपयोग नही होना चाहिये इसके साथ मरीज को खनिज लवण एंव विटामिन युक्त टॉनिक भी दिया जाय।

देने योग्य भोज्य पदार्थ – ब्रेड चपाती, चावल पका हुआ, दाल का पानी, मांस, मछली, चिकन, अण्डा, दूध, सूप, मुलायम सब्जियाँ, आलू शकरकन्दी, चीनी, गुड़ व शहद, जैम व मुरब्बा, मिठाई, ताजे फल, पानी आदि।

वर्जित भोज्य पदार्थ – सब्जियाँ सलाद के रूप में, तला हुआ भोज्य पदार्थ, सूखे फल, मेवे, पापड़ चटनी, अचार आदि।

5. पैप्टिक अल्सर (Peptic ulcer) – आमाशय तथा ऑत के डियोडिनम वाले भाग की म्यूकोसा में होने वाले घाव को सामूहिक रूप में पैप्टिक अल्सर कहते हैं। पैप्टिक अल्सर का मुख्य कारण आहार में अधिक मिर्च मसाले, खटाई आदि का सेवन है। इसके साथ –2 अधिक चाय, कॉफी, शराब का अधिक सेवन, मानसिक तनाव तथा चिन्ता भी पैप्टिक अल्सर करने में सहायक होते है।

रोग का कारण – आमाशय मे अधिक मात्रा में हाइड्रो क्लोरिक अम्ल का उत्पन्न होना जिससे आमाशय एंव आंत की भीतरी झिल्ली में घाव हो जाता है। आहार में प्रोटीन की कमी होना। अधिक सख्त किस्म के भोजन बिना चबाये व निगले जाने पर आमाशय की नली में खरोच बढ़ जाती है तथा घाव गहरा हो जाता है।

रोग के लक्षण – जी मिचलाना, उल्टी पेट में जलन व दर्द। आमाशय अल्सर में उल्टी के साथ रक्त भी आ जाता है।

आवश्यक पौष्टिक तत्व – कैलोरी – आहार में ऊर्जा की मात्रा, आयु, योनि तथा कार्य पर निर्भर करती है।

प्रोटीन – इस अवस्था में 120–150 ग्राम प्रोटीन दी जानी चाहिये। कुल प्रोटीन का 50% भाग दूध से आना चाहिये।

वसा – पैप्टिक अल्सर के मरीज का वसा भी अधिक देनी चाहिये परन्तु अधिकोश वसा दूध से ही प्राप्त होनी चाहिये। कुल कैलोरी का 40% भाग वसा से आना चाहिये।

श्वेतसार – अनाज महीन पिसा हुआ तथा छना हुआ देना चाहिये ताकि आहार में रेशे की मात्रा कम हो कुल कैलोरी का 40% भाग श्वेतसार में आना चाहिये।

विटामिन्स – मरीज को मल्टी विटामिन्स के साथ साथ विटामिन सी 500 mg प्रतिदिन देना चाहिये। क्योंकि यह विटामिन घाव भरने में सहायक होता है।

देने योग्य भोज्य पदार्थ – ब्रेड, चपाती, चावल, दाल, पकी हुई, मांस मछली चिकन पका हुआ मुलायम, उबला अण्डा, दूध, सूप, रेशेदार सब्जियॉ, उबली शकरकन्दी आलू आदि।

वर्जित भोज्य पदार्थ – मांस व चिकन का सूप, सब्जियों का सलाद, वसा, मक्खन, क्रीम आदि में तला भोज्य पदार्थ। मेवे, मसाले पापड़ चटनी, आचार ।

आहार तालिका (Diet Plan for Peptic ulcer patient)

	शाकाहारी	मांसाहारी
प्रातः काल	दूध 2 कप	दूध 2 कप
नाश्ता	ब्रेड स्लाइस 2, मक्खन 15 ग्राम, पनीर 20 ग्राम, दूध 1 कप	ब्रेड स्लाइस 2, मक्खन 20 ग्राम, उबला अण्डा 1 दूध 1 कप
10 बजे	दूध 2 कप , प्रोटीनेक्स 2 चम्मच के साथ	दूध 2 कप , प्रोटीनेक्स 2 चम्मच
दोपहर का खाना	आटे की रोटी 2, पकी एंव घुटी हुई दाल 1 कटोरी, पनीर 25 ग्राम, उबला आलू 2, कस्टर्ड 1 कटोरी	आटे की रोटी 2, पकी तथा घुटी दाल 1 कटोरी, मांस मछली पका हुआ 1 कटोरी, उबला आलू 2, कस्टर्ड 1 कटोरी
2 बजे	फल का रस 1 कप	फल का रस 1 कप
4 बजे	बिस्कुट 2, दूध 1 कप	बिस्कुट 2, दूध 1 कप
6 बजे	दूध 1 कप	दूध 1 कप
रात का खाना	उबला चावल 1 कटोरी ,	उबला चावल 1 कटोरी, दाल

	दाल 1 कटोरी, लौकी की सब्जी 1 कटोरी, पनीर उबले आलू, फ्रूट क्रीम जैली	1 कटोरी, मछली की सब्जी 1 कटोरी, उबले आलू 2, फ्रूट क्रीम जैली
सोते समय	दूध 1 कप	दूध 1 कप

यकृत रोग (Liver Diseases – Hepatitis, Cirrhosis)

1. प्रस्तावना
3. यकृत के रोग (Liver Diseases)
4. रोग के लक्षण
5. आहार व्यवस्था
6. पौष्टिक तत्वों की आवष्यकता
7. देने योग्य भोज्य पदार्थ
8. वर्जित भोज्य पदार्थ

प्रस्तावना – यकृत षरीर का सबसे बड़ा एंव महत्वपूर्ण अंग है। यकृत में पौष्टिक तत्वों जैसे – प्रोटीन, ष्वेतासार तथा वसा का चयापचय होता है और यहीं से ये विभिन्न कोषिकाओं में चले

जाते है। यकृत कुछ पौष्टिक तत्वों को संचित भी करता है जो कि आपात काल में काम आते हैं। ये पौष्टिक तत्व, ग्लाइकोजिन लौह लवण तथा विटामिन ए एंव डी।

यकृत एक अत्यन्त महत्वपूर्ण रस भी उत्पन्न करता है जिसे पित्त (Bile) कहते हैं। पित्त वसा के षोषण में सहायता करता है। प्रतिदिन यकृत से 500–1000 ml पित्त उत्पन्न होता है। पित्त एक थैली में जमा होता है जिसे पित्त थैली (Gall Bladder) कहते है। यहा से पित्त आवष्यकतानुसार डियोडिनम में चला जाता है।

यकृत के रोग (Liver Diseases)–

1. हिपेटाईटिस (Hepatitis) – इसमें यकृत में सूजन (inflammation) हो जाती है। यह रोग वायरस (Virus) के द्वारा फैलता है, जो कि दूषित भोजन तथा जल के द्वारा फैलता है। मक्खियाँ भी इस वायरस को एक स्थान से दूसरे स्थान में फैलाने में सहायक होती है कभी कभी रक्त दान करने वाले भी इस रोग को फैलाने में सहायक होते है। यकृत में प्रोटीन चयापचय के बाद, यूरिया का निर्माण होता है जिसका शरीर से निष्कासन आवश्यक होता है। यदि किसी कारणवश यूरिया शरीर से न निकल पाये तो यह यकृत पर बुरा प्रभाव डालती है।

रोग के लक्षण (Symptoms) – इस रोग में भूख मर जाती है। पीलिया भी हो जाता है तथा रोगी का वनज काफी गिर जाता है। जी मिचलाना, उल्टी, बुखार तथा पेट में पीड़ा आदि इस रोग के लक्षण हैं।

आहार व्यवस्था (Meal Management) – इस स्थिति में रोगी को अत्यन्त पौष्टिक आहार दिया जाना चाहियें। दूध अधिक मात्रा में देना आवश्यक होता है ताकि प्रोटीन की मात्रा अधिक हो सके। जी मिचलाना, उल्टी, आदि की स्थिति में तरल आहार ही देना चाहियें।

हिपेटाइटिस के रोगी के लिए पौष्टिक तत्वों की आवश्यकता –

(Nutritional Requirement for Hepatitis Patients)

कैलोरीज (Calories) – रोगी का वजन इस अवस्था में गिर जाता है जिस कारण उसे अधिक ऊर्जायुक्त आहार देना पड़ता है। इस स्थिति में 2500–4000 कैलोरीज देना चाहिये।

दूध में चीनी, शहद, ग्लूकोज, मिश्री का चूर्ण आदि डालकर देने से आहार कैलोरीज की मात्रा बढ़ जाती है।

प्रोटीन (Protien) – इस रोग में अधिक प्रोटीन युक्त आहार दिया जाये ताकि नये कोशिकाओं का निर्माण कार्य हो सके। 100 से 150 ग्रा0 प्रोटीन प्रतिदिन देनी चाहिये। प्रोटीन का अच्छा स्त्रोत दूध, अण्डा, मांस, मछली, आदि है।

वसा (Fat) – साधारण मात्रा में वसा का समावेश भी आहार में होना चाहिये परन्तु वसा उस रूप में हो जो आसानी से पच सके। तले हुए पदार्थो का उपयोग आहार में बिल्कुल नहीं होना चाहिये।

श्वेतासार (Carbohudrates) – इसकी मात्रा आहार में अधिक होनी चाहिये, क्योकि श्वेतासार ग्लाइकोजिन के रूप में जमा होता रहता है और यकृत को नष्ट होने से बचाता है।

विटामिन (Vitamins) – रोग की शुरू की अवस्था में फलों का रस अधिक मात्रा में दिया जाये ताकि विटामिन 'बी कम्पलैक्स'' एंव विटामिन 'सी' की पूर्ति हो सके। मल्टी विटामिन की गोलियाँ भी दी जा सकती है।

2. यकृत सिरोसिस (Liver Cirrhosis) – यह रोग दीर्घकालीन होता है इसमें यकृत की कोशिकाएँ नष्ट होती जाती है। और यकृत सिकुड़ जाता है। यह अवस्था अधिकांशतः हिपेटाइटिस का सही उपचार न होने, प्रोटीन की काफी समय तक आहार में कमी, विषैले पदार्थो का प्रभाव और अधिक मात्रा में शराब का प्रयोग करने से होता है।

रोग के लक्षण (Symptoms) – इस अवस्था में भूख मर जाती है मिचली, उल्टी, पेट में दर्द (दाहिनी ओर पसलियों के नीचे) एवं पीलिया के लक्षण दिखाई देते है। ठीक प्रकार से उपचार

न होने से या उपचार देर से होने से पेट में पानी भर जाता है। इसे जलोदर कहते है। कभी कभी हाथ पैर में भी पानी भर जाता है, जिसका मुख्य कारण रक्त में प्रोटीन एल्वूमिन की कमी होती है। कभी – कभी रोगी कोमा की स्थिति में आ जाता है। जिससे हिपैटिक कोमा (Hepatic Coma) कहते है।

आहार व्यवस्था (Diet Management) – इसकी आहार व्यवस्था हिपेटाइटिस के समान ही होती है। कभी कभी आहार में प्रोटीन अधिक होने से रोगी कोमा की स्थिति में आ जाता है। अतः प्रोटीन की मात्रा कम कर देनी चाहिये।

जलोदर की स्थिति में प्रोटीन उत्तम ही देनी चाहिये परन्तु नमक की मात्रा एकदम कम कर देनी चाहिये । आहार में ऐसे भोज्य पदार्थो का उपयोग करना चाहिये जिसमें नमक की मात्रा कम हो, जैसे – गेहूँ का आटा, ज्वार, चावल, मटर, गोभी, लौकी, तोरई, कददू, बैगन, करेला, ओवला, अमरूद, पपीता, चाकलेट, कोका, कॉफी, बकरी का दूध आदि।

हिपैटिक सिरोसिस के रोगी के लिए देने योग्य भोज्य पदार्थ, –

(Nutritional Requirement for Liver Cirrhosis Patients)

ब्रेड या चपाती (गेहूँ, चावल, मक्का, बाजरा, रागी), दलिया (गेहूँ, चावल, मक्का), चावल, दाल, व बीन्स, दूध व दूध से बने पदार्थ, सूप, सब्जियों की सलाद, सब्जियाँ, आलू, शकरकन्द, वसा, मक्खन, चीनी, गुड़, शहद, जैम, मुरब्बा, पेस्ट्री कस्टर्ड, मिठाई, ताजा फल, मेवे पेय पदार्थ, पानी आदि।

वर्जित भोज्य पदार्थ – मिर्च मसाले, पापड़, चटनी, आचार आदि।

(Nutrition in Surgery, Injury and Burn)

प्रस्तावना

पौष्टिक तत्वों की आवश्यकता

आपरेशन, घाव और जलने के बाद पौष्टिक तत्वों की आवश्यकता

आपरेशन के तुरन्त बाद दिया जाने वाला आहार

आहार तालिका (Diet Plan)

प्रस्तावना – इन दशाओं में पौष्टिक तत्वों की आवश्यकता अधिक होती है। इसका मुख्य कारण शरीर से काफी मात्रा में रक्त का बाहर निकल जाना है। रक्त के साथ साथ सीरम प्रोटीन, हिमोग्लोबिन, इलेक्ट्रोबिन, इलेक्ट्रोलाइट्स आदि भी निकल जाते हैं। ऐसे व्यक्ति का आहार पहले से ही असन्तुलित रहता है इस कारण शरीर का भार गिरने लगता है तथा घाव देर से भरता है।

पौष्टिक तत्वों की आवश्यकता (Nutritional Requirements) – घाव भरने के लिए निम्न पौष्टिक तत्वों की अधिक मात्रा में आवश्यकता होती है

प्रोटीन – आहार में उचित मात्रा में प्रोटीन लेने से घाव जल्दी भरता है तथा घाव के, स्थान पर सूजन नही हो पाती। जलने पर नई खाल आने के लिए भी अधिक और उत्तम प्रोटीन की आवश्यकता होती है, प्रोटीन शरीर में एण्टीबाडीज् की मात्रा को भी बढ़ाता है जिससे संक्रामक रोग होने की कम सम्भावना रहती है। इसके साथ साथ जिगर के रोगों से बचाव भी होता है।

विटामिन सी – इस दशा में विटामिन सी अधिक मात्रा में दिया जाना चाहिए ताकि घाव जल्दी भर जाये क्योंकि कोलेजन के निर्माण में विटामिन सी की आवश्यकता होती है।

विटामिन के – प्रोथ्रोमविन के निर्माण के लिए विटामिन 'के' की आवश्यकता होती है। इसकी कमी से प्रोथ्रोमविन का निर्माण नही हो पाता है तथा रक्त का जमाव नही होता जिससे रक्त स्त्राव होता रहता है।

आपरेशन, घाव और जलने के बाद पौष्टिक तत्वों की आवश्यकता –

कैलरीज – इस दशा में रोगी पूर्ण आराम की स्थिति में रहता है अतः ऐसे रोगी को कैलरीज की आवश्यकता दिमागी काम करने वाले से थोड़ी अधिक होती है। इसके साथ साथ इन स्थितियों में शरीर का वनज भी गिर जाती है। इस प्रकार साधारण स्थिति का 1/2 गुनी अधिक कैलरीज ऐसे व्यक्ति को देनी चाहिए। कैलरीज की कमी होने से तन्तुओं का निर्माण ठीक प्रकार से नही होता ।

प्रोटीन – इस दशा में अधिक मात्रा में शरीर से नाइट्रोजन नष्ट हो जाती है अतः प्रोटीन की आवश्यकता अधिक हो जाती है। 100–120 ग्रा0 प्रोटीन दी जानी चाहिए। प्रोटीन मुख्यतः प्राणीज्य स्त्रोत (Animal Protein) से आनी चाहिए – जैसे दूध, दूध से बने पदार्थ, माँस, मछली आदि

ष्वेतसार – कुल कैलरीज का 5% भाग श्वेतासार से आना चाहिए।

वसा – कुल कैलरीज का 20% भाग वसा से आना चाहिए। वसा मुख्यतया वनस्पति स्त्रोत से प्राप्त होनी चाहिए ताकि आवश्यक फैटी अम्लों की जरूरत पूरी हो जाये।

खनिज लवण – तन्तु प्रोटीन के साथ पोटेशियम तथा फॉसफोरस अधिक मात्रा में नष्ट हो जाता है। पसीने तथा कै के साथ शरीर से सोडियम एंव क्लोराइड की अधिक मात्रा निकल जाती है। रोगी के शरीर में इलैक्ट्रोलाइट की उचित मात्रा होनी चाहिये ताकि शरीर से इनकी कमी न होने पाये। आपरेशन तथा चोट के बाद लौह लवण, विटामिन सी, फोलिक अम्ल तथा विटामिन बी$_2$ की मात्रा बढ़ा देनी चाहिए।

जल सन्तुलन – सर्जरी, जलन तथा चोट के बाद शरीर से काफी मात्रा में जल निकल जाता है। अतः ऐसी अवस्था में जल की कमी नही होनी चाहिये।

आपरेशन के तुरन्त बाद दिया जाने वाला आहार – रोगी आपरेशन के बाद तीन दिनों तक मुँह से किसी प्रकार का आहार ग्रहण न कर सके तो उसे ट्यूब द्वारा आहार दिया जाना चाहिए।

इन्ट्रावीनस फीडिंग (Intravenous Feeding) – इस प्रकार के आहार के मुख्य उद्देश्य निम्न हैं।

1 शरीर में जल तथा इलेक्ट्रोलाइट्स का संतुलन बनाए रखना।

2 तन्तुओं के नष्ट होने से प्रोटीन की आवश्यकता अधिक हो जाती है । इस फीडिंग में अमीनों अम्ल का मिश्रण भी दिया जाता है जिससे प्रोटीन की संरचना होती है।

3 इस फीडिंग से ऊर्जा की आवश्यकता की पूर्ति भी की जा सकती है।

इन्ट्रावीनस फीडिंग निम्न रोगों में दी जाती है–

1. आमाशय और ऑत के आपरेशन, अधिक जल जाने पर या दुर्घटना के बाद ।
2. मुँह फेरिंग्स तथा इसोफेगस के कैन्सर में जब रोगी मुँह से आहार ग्रहण करने में असमर्थ होता है।
3. बेहोशी की अवस्था में भी यह फीडिंग दी जाती है।

इन्ट्रावीनस फीडिंग के बाद रोगी को ट्यूब फीडिंग दी जाती है –

ट्यूब फीडिंग – जब रोगी मुँह से आहार ग्रहण नही कर पाता है तब ट्यूब आमाशय तथा जेज्यूनम आदि में डाली जाती है।

ट्यूब फीडिंग के बाद रोगी को साधारण आहार दिया जाता है

साधारण आहार – यदि आपरेशन आमाशय, ऑत, यकृत तथा पैन्क्रीयाज् का नहीं है तो रोगी को 42 घण्टे बाद साधारण आहार दिया जाता है ।

आहार तालिका – मात्रा / व्यक्ति / दिन

दूध	–	2 लीटर
ग्लूकोज	–	300 ग्राम
चीनी	–	100 ग्राम
डेक्स्ट्री माल्टोज	–	200 ग्राम
फलों का रस	–	500 मी0ग्रा0

हृदय सम्बन्धी रोग (**Heart Diseases**)

प्रस्तावना

हृदय सम्बन्धी रोग

रोग के कारण

आहार व्यवस्था

देने योग्य भोज्य पदार्थ

वर्जित भोज्य पदार्थ

आहार तालिका

प्रस्तावना – हृदय एक Hollow Conical और Musculo tendencies organ है। Thorosic Cavity में यह chest की Left Side में रहता है। Sternum के पीछे और lungs के बीच में स्थित रहता है। Heart का Base ऊपर और Apex नीचे हैं।

हृदय सम्बन्धी रोग – हृदय रोग आजकल के समय में बहुत तेजी से बढ़ रहा है। इसके अर्न्तगत हृदय सम्बन्धी कई रोग आते हैं। जैसे –

1. एथरोस्क्लेरोसिस (Atherosclerosis)
2. उच्च रक्त चाप (Hypertension)
3. कॉनजेस्टिव कार्डियक फेलियोर (Congestive Cardic Failure)

1. **एथरोस्क्लेरोसिस** (Atherosclerosis) – यह दशा तब होती है जब रक्त धमनियों की आन्तरिक झिल्ली (intima) कड़ी हो जाती है। इसका कड़ापन वसा के जमाव के कारण होता है, इसी कारण हार्ट अटैक (Heart Attack) तथा स्ट्रोक्स (Strokes) हो जाता है। एथरोस्क्लेरोसिस की स्थिति पूरे जीवन चक्र में धीरे धीरे होती है। जब धमनियों में कोलेस्टेरॉल की मात्रा ज्यादा हो जाती है, तो रक्त धमनियों में रूकावट

होने से रक्त का हृदय में बहाव अधिक परेशानी से होता है तथा इस अवस्था को एन्जाइना पेक्टोरिस (Anjina Pectoris) कहते हैं, जो आगे चलकर (Coronary Heart Disease) कहलाती है।

2. **उच्च रक्त चाप** (Hypertension) – उच्च रक्तचाप रोग नही है आपितु रोग का लक्षण है। उच्च रक्तचाप (Hypertension) में Systolic और Diastolic Blood Pressure की दशा इस प्रकार है –

   Systolic BP बढ़कर 150 mm Hg से ऊपर,

   Diastolic BP बढ़कर 100 mm Hg से ऊपर।

3. **कॉनजेस्टिव कार्डियक फेलियोर** (Congestive Cardiac Failure) – यह स्थिति तब आती है जब हृदय टिशुओं से रक्त को ठीक प्रकार से रक्त प्रवाह नही कर पाता। इस दशा में टिशुओं में नमक की मात्रा अधिक हो जाती है। नमक पानी को शोषित करता है जिससे चेस्ट, पेट, पीठ, टॉग तथा पैर में पानी भर जाता है। इन सभी भागों में सूजन आ जाती है।

रोग के कारण –

1. वंशानुक्रम – परिवार में यदि किसी को हृदय सम्बन्धी बीमारी है, तो इसका प्रभाव उसकी आने वाली पीढ़ी पर भी पड़ता है। वह जीवन में किसी भी अवस्था में इस रोग से ग्रसित हो जाता है।

2. मानसिक तनाव – आज मनुष्य का जीवन बहुत ही तनाव पूर्ण हो गया है और यही तनाव पूर्ण जीवन मनुष्य में हृदय सम्बन्धी रोग उत्पन्न करता हैं।

3. मोटापा – जो व्यक्ति वसायुक्त भोजन का ज्यादा सेवन करतें हैं वह अधिक मोटे हो जाते है और उनमें कोलेस्ट्रॉल की मात्रा भी बढ़ जाती है जिसके कारण उच्च रक्त चाप सम्बन्धी परेशानी पैदा हो जाती है।

4. व्यक्ति की बुरी आदतें – उत्तेजना प्रदान करने वाले पदार्थो के सेवन से जैसे – मद्यपान, धूम्रपान, चाय, कॉफी आदि।

5. मधुमेह – इससे पीड़ित लोगो को भी हृदय रोग हो जाता है।

6. वृद्धावस्था – उम्र के साथ साथ रक्तचाप भी बढ़ता है तथा इस अवस्था में व्यक्ति इस बीमारी का शिकार हो जाते है।

7. व्यायाम – इसकी कमी से यह रोग होता है नलिका विहीन ग्रन्थियों की अधिक सक्रियता (थायरॉइड) भी हृदय का कार्य भार बढ़ाती है।

आहारव्यवस्था – हृदय रोग से पीड़ित व्यक्ति के आहार में नमक तथा वसा की मात्रा कम कर देनी चाहिए। साथ ही आहार में निम्न पौष्टिक तत्व उचित मात्रा में होने चाहिए।

1. कैलोरीज – इस दशा में रोगी को पूर्ण आराम दिया जाता है अतः कम कैलोरीज वाले आहार की व्यवस्था की जाये।

2. प्रोटीन – इस दशा में प्रोटीन उचित मात्रा में दें। प्रोटीन की मात्रा 40 ग्रा0 प्रतिदिन दी जाये।

3. वसा – आहार में वसा तेल के रूप में दी जानी चाहिए, क्योंकि इसमें आवश्यक वसीय अम्लों की अधिकता होती है तथा यह रक्त में कोलेस्टेरॉल की मात्रा को कम करता है। कुल ऊर्जा का 20–25%, भाग ही वसा से आना चाहिए।

4. कोलेस्टेरॉल – ऐसे भोज्य पदार्थ ग्रहण करें जिसमें कोलेस्टेरॉल की मात्रा कम हो।

5. श्वेतसार (Carbohydrate) – ज्यादा चीनी लेने से रक्त में कोलेस्टेरॉल की मात्रा बढ़ जाती है। इसलिए आहार में श्वेतासार स्टार्च के रूप में दें।

6. विटामिन (Vitamins) – आहार में सभी विटामिन का उचित मात्रा में समावेश हो, मल्टी विटामिन की गोली भी दे सकते है।

7. खनिज लवण (Minerals) – सोडियम को छोड़कर सभी खनिज लवण उचित मात्रा में देना चाहिए। साथ में शराब तथा सिगरेट भी बंद करनी चाहिए।

देने योग्य भोज्य पदार्थ (Foods Allowed) – तिल, सरसों, सोयाबीन का तेल तथा असंतृप्त वसीय अम्ल वाले तेल। दलिया, ज्वार, बाजरा, हरी सब्जी, खीरा, मूली, टमाटर, आदि।

वर्जित भोज्य पदार्थ (Foods Avoid) – अधिक नमक युक्त भोज्य पदार्थ, समुद्री मछली, मॉस चटपटे मसाले युक्त व्यंजन, घी, मक्खन, सूखे मेवे आदि।

आहार तालिका (Dict Plan) – उच्च रक्त चाप वाले मरीज के लिए–

	शाकाहारी	मॉसाहारी
सुबह	दूध 1 कप	दूध 1 कप
नाश्ता	मीठा दलिया 1 कप, ब्रेड जैम 2 स्लाइस, फल 1, दूध 1 कप	मीठा दलिया 1 कप, ब्रेड जैम 2 स्लाइस, फल 1 दूध 1 कप
दोपहर का खाना	चपाती 3, दाल 1/2 कटोरी, दही 2 कटोरी, आलू तथा काशीफल की सब्जी 1 कटोरी, सलाद 1 प्लेट	चपाती 3, करी 1/2 कटोरी दही 1 कटोरी, आलू तथा काशीफल सब्जी 1 कटोरी, सलाद 1 प्लेट
चाय	फलों का रस 1 गिलास, मीठे बिस्कुट 2	फलों का रस 1 गिलास, मीठे बिस्कुट 2
रात का खाना	चावल 1 प्लेट, पालक पनीर की सब्जी 1 कटोरी, लौकी की सब्जी 1 कटोरी, फ्रूट सलाद 1 प्लेट, श्री खण्ड 1 छोटी कटोरी	चावल 1 प्लेट, पालक पनीर की सब्जी 1 कटोरी, लौकी की सब्जी 1 कटोरी, फ्रूट सलाद 1 प्लेट, श्री खण्ड 1 छोटी कटोरी

गुर्दा रोग (**Kidney Diseases**)

प्रस्तावना

किडनी के कार्य (Function of Kidney)

किडनी के रोग (Kidney Diseases)

रोग के कारण

आहार व्यवस्था

प्रस्तावना – वृक्क (गुर्दे) की Basic Unit नेफरौन्स (Naphrons) होती है। नेफरौन्स में रक्त कोशिकाओं का जाल बिछा रहता है जिसे ग्लोमैरूल्स (Glomerulus) कहते है। पूरे एक दिन में ग्लोमैरूल्स (Glomerulus Capillaries) के द्वारा 50 हजार मी0ली0 पानी और 22,500 मिलियन सोडियम मौलीक्यूल Filter होता है। जिसमें से यूरिन के रूप में बाहर होने के लिए 1500 मी0ली0 पानी और 100 से 120 मिलियन सोडियम मौलीक्यूल ही शेष बचता है। बाकी मात्रा Tubular Section के द्वारा पुनः सोख ली जाती है।

किडनी के कार्य (Function of Kidney) – ग्लोमैरूल्स रक्त को छानने का काम करता है। विभिन्न पौष्टिक तत्वों के अन्तिम पदार्थ चयापचय के पश्चात् रक्त में मिल जाते हैं और ग्लोमैरूल्स इसी रक्त को छानकर उसमें से अनावश्यक पदार्थ जैसे – यूरिया, यूरिक एसिड, क्रियैटिनिन आदि निकाल देता है। इसके साथ जिन पदार्थो की शरीर को फिर से आवश्यकता होती है उन्हें वापस रक्त में डाल देता है जैसे – ग्लूकोज, विटामिन सी, अमीनों अम्ल, सोडियम क्लोराइड आदि। वृक्क (Kidney) शरीर में अम्ल तथा क्षार की मात्रा भी सन्तुलित करता है।

किडनी के रोग (Kidney Diseases) –

1. नेफराइटिस (Nephritis)

   यह दो प्रकार की होती है–

   1. तीव्र ग्लोमैरूलो नेफराइटिस 2. दीर्घ कालीन ग्लोमैरूलो नेफराइटिस

2. यूरेमिया (Acute or Chronic renal failure)

3. पथरी (Urinary Calculi or Urolitheasis)

1. नेफराइटिस (Nephritis) –

1. तीव्र ग्लोमैरूलो नेफराइटिस (Acute Glomerulo Nephritis) – यह रोग अधिकांश छोटे बच्चों में देखा गया है। स्कारलेट बुखार या श्वसन तंत्र पर स्ट्रैप्टोकोकाय के संक्रामक से यह रोग होता है। तीव्र दशा में रोग के निम्न लक्षण है। जी मिचलाना, बुखार, कै, मूत्र में रक्त तथा प्रोटीन और रक्तचाप भी बढ़ जाता है। भूख मर जाती है।

2. दीर्घ कालीन ग्लोमैरूलो नेफटाइटिस (Chronic Glomerulo Nephritis) – इसमें वृक्क (Kidney) काफी नष्ट हो जाती है। इसके लक्षण हैं – सिरदर्द, थकावट तथा दृष्टि में धब्बे, अधिक रक्तचाप, पेशाब में अधिक प्रोटीन/यूरिया आदि।

2. यूरेमिया (Acute or Chronic Failure) – यूरेमिया शब्द किसी भी कारण से होने वाले Kidney Failure के लिए प्रयोग किया जाता है। जब गुर्दों का कार्य बाधित हो जाता है तब कई कॉम्प्लैक्स और Bio Chemical परिवर्तन होने लगते हैं, जो कि ब्लड यूरिया की अपेक्षा Kidney Failure के लिये ज्यादा जिम्मेदार होते हैं। इन बदलाव के अन्दर Hydrogen Ion Concentration का असंतुलित होना और पानी एवं electrolytes की मात्रा का असंतुलित होना भी देखा जाता है, साथ ही renal failure की दशा में ज्यादातर उच्च रक्तचाप पाया जाता है और यह Kidney Failure की दशा को और भी ज्यादा जटिल कर देता है।

3. पथरी (Urinary Calculi or Urolitheases) – इसका मतलब पेशाब की नली में पथरी से होता है। ये पथरी Kidney, Ureter, Urinary, Bladder, Urethra आदि कहीं भी हो सकती है। पेशाब में जब ज्यादा नमक की मात्रा पैदा हो जाती है तब उसकी नली में पथरी का बनना शुरू हो जाता है।

रोगों के कारण –

1. पेशाब की नली का संक्रमण 2. पथरी, उच्च रक्तचाप, मधुमेह, गठिया, विषैले पदाथों का इस्तेमाल आदि।

आहारव्यवस्था –

कैलोरी – आयु और शरीर के आकार के अनुसार मरीज को साधारण कैलोरी की आवश्यकता होती है।

प्रोटीन – प्रोटीन रोगी को मुख्यतः प्राणीज्य साधन (animal protein) से प्राप्त होनी चाहिए। प्रोटीन साधारण मात्रा में दें। यदि मूत्र में ज्यादा प्रोटीन आये तो प्रोटीन की मात्रा ज्यादा दें।

सोडियम – हाथ–पैरो में सूजन तथा उच्च रक्त चाप में नमक की मात्रा आहार में कम दे। इस रोग में रक्त अल्पता भी हो जाती है, अतः रोगी को लौह लवण की गोली भी देना आवश्यक होता है।

जल – Oligurea की दशा में जल की मात्रा कम कर दी जाती है। Acute नेफराइटिस में जल की मात्रा रोगी को कम देते है। परन्तु रोगी फलों का रस, फलों की बर्फ, मीठी हल्की चाय, आदि आसानी से ग्रहण कर सकता है।

देने योग्य भोज्य पदार्थ – गेहूँ, ज्वार, बाजरा, दूध व दूध से बने पदार्थ, फल, मिठाइ, पेय पदार्थ।

वर्जित भोज्य पदार्थ – मेवे, मिर्च मसाले, पापड़, चटनी, आचार, अण्डा मांस मछली चिकेन, दाल व बीन्स, पका चावल आदि।

मोटापा एंव अल्पभार (Obesity, Under Nutrition or Under weight)

प्रस्तावना

मोटापे का कारण

कुपोषण (under Nutrition)

अल्पहार (Under weight)

आहार व्यवस्था

देने योग्य भोज्य पदाथ।

वर्जित भोज्य पदार्थ

आहार तालिका

प्रस्तावना – मोटापा अत्याधिक प्रचलित कुपोषण है जो कि अधिकतर उच्च वर्गीय लोगों में पाया जाता है। मेटापा से अर्थ है– कि शरीर में बहुत अधिक वसा का एकत्रित हो जाना। आयु के साथ साथ शरीर का भार घटता बढ़ता रहता है। जब औसत भार से दस प्रतिशत भार अधिक बढ़ जाये तो इलाज की आवश्यकता होती है।

मोटापे का कारण (Causes of obesity) –

1. आयु और लिंग – मोटापा किसी भी आयु एंव लिंग में हो सकता है, लेकिन किशोरावस्था के बाद पुरूषों की अपेक्षा स्त्रियां मोटापे से अधिक प्रभावित होती हैं।

2. गर्भावस्था (Pregnancy) – साधारण स्थिति से गर्भकाल में औसत 27.5 पौण्ड भार बढ़ना चाहिए परन्तु कुछ स्त्रियों का भार अधिक बढ़ जाता है। जो कि वसा के रूप में शरीर में एकत्रित हो जाता है।

3. आर्थिक स्थिति (Economic Condition) – मध्यवर्गीय और उच्च वर्गीय लोग अधिकतर तले हुए एंव शर्करा युक्त भोज्य पदार्थो का सेवन करते हैं, जिससे मोटापा बढता है।

4. भोजन सम्बन्धी आदतें (Dictary habits) – मोटे लोगों की भोजन सम्बन्धी आदतें भिन्न होती हैं। कुछ लोग थोड़ा थोड़ा हर समय खाते रहते हैं।

5. शारीरिक परिश्रम (Physical Exercise) – शारीरिक परिश्रम कम करने वालों में मोटापा कम पाया जाता है।

6. मनोवैज्ञानिक कारण (Psychological factor) – अप्रसन्न लोग अधिक भोजन करते हैं।

7. वंशानुक्रम (Heriditary) – मोटापा पीढ़ी दर पीढ़ी भी चलता है। कुछ Genes मोटापा बढ़ाने के कारक होते हैं।

कुपोषण (Under Nutrition) – अपर्याप्त पोषण वह है जिसमें पौष्टिक तत्व मात्रा एंव गुणों की दृष्टि से शरीर की आवश्यकता के अनुपात में सही नहीं होता या उसमें किसी एक या दो पौष्टिक तत्वों की कमी होती है।

कुपोषण (Under Nutrition) तीन प्रकार का होता है –

1. प्रारम्भिक कुपोषण (Primary Under Nutrition) – यह आहार में पोषक तत्वों की कमी से उत्पन्न होता है।

2. द्वितीय कुपोषण (Secondary Under Nutrition) – यह शरीर में पोषक तत्वों के पूर्ण उपयोंग न होने के कारण उत्पन्न होता है।

3. अधिक पोषण (Over Nutrition) – यह शरीर की आवश्यकता से अधिक पोषक आहार ग्रहण करने से होता है।

इस प्रकार कुपोषण (Under Nutrition) ऐसी समस्या है जो कि किसी व्यक्तित्व के शरीरिक, मानसिक तथा व्यक्ति के विकास को काफी हद तक प्रभावित करती है।

अल्पभार (Under Weight) – दुर्बलता भी कुपोषण का एक लक्षण हैं जिसमें व्यक्ति का शरीरिक भार उस अवस्था के सामान्य भार से 10% से भी अधिक कम होता है।

अल्पभार के कारण –

1. अन्तः स्त्रावी ग्रन्थियों का प्रभाव

2. कम कैलोरीयुक्त भोजन का मिलना

3. अपर्याप्त भोजन

4. खराब भोजन

5. भोजन सम्बन्धी आदतों का ठीक न होना।

6. आर्थिक स्थिति ठीक न होना

7. आहार विज्ञान के ज्ञान की कमी

8. अस्वास्थ्यकर वातावरण

आहारव्यवस्था (Diet Management) –

कैलरीज (Calories) – दिमागी कार्य करने वाले मोटे व्यक्ति को – 20 कैलरीज प्रति कि0ग्रा0 आदर्श वजन के अनुसार देना चाहिए और मध्यम कार्य करने वालों का 25 कैलरीज प्रति कि0ग्रा0 देनी चाहिए।

प्रोटीन (Protein) – प्रोटीन सामान्य दी जानी चाहिए। 1 ग्र0 प्रोटीन प्रति कि0ग्रा0 शरीरिक वजन के अनुसार देना चाहिए।

वसा (Fats) – वसा मुख्यतया वनस्पति तेल के रूप में दी जानी चाहिए। वसा से कैलरीज अधिक मात्रा में प्राप्त होती है।

श्वेतसार (Carbohydrates) – श्वेतसार मुख्य रूप से उस रूप में दें जिससे पेट भरापन महसूस हो।

जीवन सत्व (Vitamins) – विटामिन ए और डी की मात्रा ज्या देनी चाहिए आहार में।

खनिज लवण (Minerals) – मोटापे में नमक की मात्रा संयमित होनी चाहिए, क्योंकि नमक शरीर में तरल पदार्थो का जमाव करता है।

पानी (Water) – आहार में पानी तथा अन्य तरल पदार्थ अधिक मात्रा में लें।

देने योग्य भोज्य पदार्थ – छिलके वाले अनाज, फल (कम मीठे वाले) हरी सब्जियाँ, क्रीम रहित दूध व दूध से बने पदार्थ आदि।

वर्जित भोज्य पदार्थ – कोल्डड्रिंक, शर्बत, मीठी लस्सी, मिठाईयाँ, जैम, जैली, फास्ड फूड, तले हुए पदार्थ क्रिम युक्त पदार्थ, आलू, अरबी, चावल, आदि।

(नोट – अल्पभार (Under Weight) में ये सारी चीजें ज्यादा मात्रा में व्यक्ति के आहार में देनी चाहिए।)

आहार तालिका (Diet Plan)

प्रातः काल	चाय (बिना चीनी की)
सुबह का नाश्ता	फल या फलों का रस 1 गिलास, उबला अण्डा 1, डबल रोटी का टुकड़ा 1, वसा रहित दूध 1 कप,
दोपहर का खाना	रोटी (मिक्स) 2, दाल 1 कटोरी, वसा रहित दही 1 कटोरी, हरे पत्ते वाली सब्जी 1 कटोरी, दाल 1 कटोरी, सलाद 1 क्वार्टर प्लेट
शाम की चाय	चाय (बिना शक्कर) 1 कप, मौसम का फल
रात का खाना	सब्जी का सूप 1 कप, रोटी (मिक्स) 2, हरी सब्जी 1 कटोरी, वसा रहित दूध का दही 1 कटोरी, सलाद 1 क्वार्टर प्लेट
सोते समय	दूध (वसा रहित) 1 गिलास